उपदेश-कुसमाञ्जलि ।

लेखक—

गणेशदत्त शर्म्मा वैदिक "इन्द्र"

आगर-निवासी ।

प्रकाशक

हरिदास वैद्य,

२०१ हरीसन रोड, कलकत्ता ।

२०१ हरीसन रोड, के नरसिंह प्रेस में

बाबू रामप्रताप भार्गव द्वारा मुद्रित ।

सन् १९१५

प्रथम वार १०००

मूल्य ।)

निवेदन ।

प्रिय पाठक गण ! यों तो उपदेश सम्बन्धी कई पुस्तकें हिन्दी-भाषा में प्रकाशित हो चुकी हैं ; तथापि यह "उपदेश-कुसुमाञ्जलि" अति परिश्रम के साथ संग्रह कर, आप लोगों की सेवा में उपस्थित होता हूँ ।

... आप अपनावेंगे । उपदेशों के विषय में अधिक हुए अपनी जीवन-नौका संसार-महोदधि... चाहिये ।

(३) जो इस अद्भुत संसारके सच्चे स्वरूप को देखेगा, उससे ईश्वर छिपा न रहेगा । ... उदार

(४) संसार के अनर्थों से छिपकर दुष्कर्म ...

ऐसा (१७) किसीसे बैर-भाव न करो ; क्योंकि संसार तुम्हारा और तुम संसार के हो । ... (...)

(१८) आत्म-विश्वास और ईश्वरीय विश्वास को दृढ़ करो ।

(१९) संसार को सुधार करो । सुधार का अर्थ बिगड़ी को बनाने का है, न कि प्राचीनता को दूर करने का । अच्छी अच्छी बातोंका विचार जीवित

रखने तथा बुरी बातों का समूल नष्ट करने का प्रयत्न करना चाहिये। यही सुधार कहाता है।

(२०) प्राचीन तथा अर्वाचीन समयमें बहुत अन्तर है। प्राचीन समय की आवश्यकताएँ हमारे पूर्वजोंने पूरी की थीं और इस समय की आवश्यकताएँ पूरी करना हमारा कर्तव्य है।

(२१) क्या हम कुछ नहीं कर सकते ? नहीं, हमारी कठिनाइयों पर विजय पाने की कोशिशें हमें ही करनी चाहियें।

(२२) सर्वदा यह बात ध्यानमें रखनी चाहिये, कि हम कोई भी कार्य्य प्रशंसाके हेतु नहीं कर रहे हैं; किन्तु संसारके उपकारके हेतु करते हैं। इसमें हमें जितने कष्ट, जितनी यातनाएँ, अपमान, दण्ड एवं कठिनाइयाँ भोगनी पड़ें, उन्हें धीरता-पूर्वक सहन करना चाहिये; तभी हम विजय प्राप्त करनेमें समर्थ हो सकेंगे, अन्यथा नहीं।

(२३) मनुष्य को उचित है कि एक एक की सहायता करे; ऐसा करनेसे सुख और आनन्द का सञ्चार होता है।

(२४) सबसे प्रेम रखना चाहिये। प्रेमके द्वारा संसार की सैकड़ों बाधाएँ तथा कठिनाइयाँ सहज ही में दूर हो सकती हैं।

(२५) जो अपनी बुद्धिको वशमें नहीं रख सकता, वह इस संसार-सागरमें कोई भी बड़ा कार्य करने योग्य नहीं।

(२६) मनुष्यको चाहिये कि किसी की हानि देखकर प्रसन्न न हो, या किसी का अभ्युदय देखकर जले नहीं। ऐसा करनेवाले पुरुष का आदर्श जीवन बेकार हो जाता है।

(२७) कभी किसी मनुष्यको अपनी वर्त्तमान स्थिति पर खिन्नचित्त तथा व्याकुल न रहना चाहिये; किन्तु धैर्य तथा विचार पूर्वक अपनी दशा सुधारने का यत्न करना चाहिये।

(२८) जो जिस सम्बन्धके कारण, जितने प्रेम व कृपा का अधिकारी है उससे उतना ही प्रेम करो। कम या अधिक करने से हानि होने की सम्भावना है।

(२९) मनुष्य को उचित है कि हर एक कार्य में समता का विचार रखे। विषमतासे प्रत्येक कार्य बिगड़ जाता है।

(३०) एक समयमें एक ही काम करो। कई अधूरे कार्य करनेकी अपेक्षा एक पूरा करना अच्छा है।

(३१) दुनिया न तो योग्यता देखती है और न यह देखती है कि कितना समय लगा; दुनिया कार्य की सफलता देखती है।

(३२) आवश्यकता से अधिक की तलाशमें अपने आपको कष्ट न दो।

(३३) जिस वस्तु की आवश्यकता ही नहीं, उसके पाने को परिश्रम करना व्यर्थ है।

(३४) कार्य को हाथमें लेनेसे पूर्व खूब सोच लो, विचार करने पर यदि वह समझमें आजावे तो प्रारम्भ कर दो और फिर उसे बिना पूरा किये कदापि न छोड़ो।

(३५) कभी अपनी शक्तिसे बाहर काम न करो और न करने का नाम लो। अपने कथन का कार्यसे प्रमाण दो। अर्थात् अपने वचन को पूर्ण करने का सर्वदा विशेष ध्यान रखो।

(३६) दारिद्र्य के भीषण-तापसे मनुष्य को कदापि नहीं घबराना चाहिये।

(३७) मनुष्यको सर्वदा प्रफुल्ल रहना चाहिये और सर्वदा अपने प्रधान कार्य को ओर लक्ष्य रखना चाहिये।

(३८) किसी कार्य को अथवा बात को हाथमें लेनेसे पहिले अन्तिम परिणाम सोच लो; जिस बात या कार्यसे किसी को लाभ न हो, उसे कहने वा करनेसे क्या लाभ ?

(३९) वचन पालना भी नितान्त आवश्यक है।

एक बेर भी वचन भङ्ग हो जाने पर, वचन भङ्ग करने की आदत पड़ जावेगी; अतएव सर्वदा वचन पालन करो।

(४०) "दूसरे की वस्तु हरण करना" ऐसा विचार चित्तमें पैदा होजाना ही घोर पाप है।

(४१) यदि भूलसे दूसरे की वस्तु अपने पास अधिक आगई हो, तो उसे अवश्य लौटा देना चाहिये। इसी प्रकार यदि हमें किसीकी खोई वस्तु मिल जावे तो उसे तलाश करके जिसकी वस्तु है उसे वापिसदे देना चाहिये।

(४२) समाज दो कारणोंसे किया जाता है,—एक तो स्वयं ज्ञान-वृद्धि होती है, दूसरे उस उपार्जित ज्ञान को दूसरों को देनेसे उनका भला होता है।

(४३) या तो बिलकुल चुप ही रहो या चुप रहने से कोई अच्छी बात कहो।

(४४ , या तो सच ही बात कहो, या चुप ही रहो।

(४५) कई मनुष्यों की आदत छोटे बालकों के समान होती है। जैसे बालक कोई सुन्दर वस्तु देख-लेने पर उसके पाने के अर्थ भरसक प्रयत्न करता है; इसी प्रकार कई पुरुषों की आदत होती है कि कोई वस्तु देखते ही उसे पाने को लालायित हो उठते हैं; चाहे उस वस्तु की उन्हें आवश्यकता हो वा न हो, उसे प्राप्त किये बिना उन्हें चैन नहीं पड़ता।

(४६) ज्ञान-प्राप्ति के लिये मनुष्य को शम और दम साधना चाहिये। शम, दम का साधन ही ज्ञान प्राप्ति का सुगम और अलभ्य उपाय है। शम अर्थात् मनको असत्य वाह्य वस्तुओंसे अलग रखना। दम अर्थात् देखने सूँघने की वाह्य इन्द्रियादिकके निरर्थक व्यय को रोकना।

(४७) दुष्टके साथ मित्रता व प्रीति कदापि न करनी चाहिये। अङ्गारा जब गरम होता है तब हाथ को जला देता है और ठण्डा होने पर काले हाथ कर देता है।

(४८) जो बातें हो सकती हैं, वे ही हो सकती हैं और जो नहीं हो सकतीं वे नहीं हो सकतीं। जैसे थलपर गाड़ी चलेगी और जल पर नौका चलेगी। जलपर गाड़ी और थलपर नौका कदापि नहीं चल सकती।

(४९) यदि दुर्जन विद्वान भी हो तो उसे त्यागना ही श्रेय है; जैसे मणियुक्त सर्प को।

(५०) जिसका मन सन्तुष्ट है, उसको सब सम्पत्तियाँ मिल जाती हैं।

(५१) मनुष्य को चाहिये कि जहाँ तक होसके क़र्ज़ कभी न लेवे। हिसाब किताब से चलनेवाले पुरुष को क़र्ज़ लेनेका कम मौक़ा आता है। और मौक़ा आने पर इस बात का विशेष ध्यान रखा जावे

कि आगेको क़र्ज़ लेने की आदत न पड़ जावे। अन्य व्यसनों के सदृश यह क़र्ज़-व्यसन भी धीरे धीरे बढ़ जाता है; अतः एक बेर क़र्ज़ लेने पर दूसरी बेर साव-धान होजाओ।

(५२) मनुष्य को उचित है कि पहिला क़र्ज़ अदा करने पर क़र्ज़ ले; किन्तु क़र्ज़में क़र्ज़ कदापि न बढ़ावे; नहीं तो अन्तमें उपहास होता है। दूसरी बात यह भी है कि क़र्ज़ लेना जितना सहज है, देना उतना कठिन भी है।

(५३) जो मनुष्य पराई सम्पति पर आनन्द लूटता है, वह तिरस्कार-योग्य है। परन्तु क़र्ज़ ले लेकर भोग-विलास करने वालेकी गणना, डाका डालनेवाले डाकू से भी अधिक है। क्योंकि डाकूको तो अपने चित्तमें इस दुष्कर्मकी निन्द्यावस्था विदित रहती है; परन्तु ये दूसरे नराधम क़र्ज़ी-डाकू अपना सिर ऊँचा किये रहते हैं।

(५४) जिस मनुष्यकी आमदनी अधिक और ख़र्च कम है, वही धनी है और जिस मनुष्यकी आय २०००) रु० हो और ख़र्च २००१) रु० हो तो वह मनुष्य निस्सन्देह दरिद्री है। जिसकी आमदनी ख़र्चसे अधिक है, चाहे १०) रु० मासिक ही हो, वह ही संसा-रमें धनी है।

(५५) मनुष्य धनी होनेसे ही सुखी और निर्धन होनेसे ही दुखी होते हैं, यह कोई नियम नहीं। कई धनी विद्वान व बुद्धिमान बाहरसे प्रसन्नचित्त आते हैं और घरमें स्त्री, पुत्र, आदिके दुराचरण देख, अपनी मृत्युकी याद करने लगते हैं। और कई दिन भर गेंती, फावड़ा चलाकर तथा टोकरी डालकर, खूनको पसीना कर, घर आते ही अपनी सती साध्वी स्त्री व आज्ञाकारी पुत्रके मुखको देख कर, अपनी दिन भरकी मिहनतको भूल कर, स्वर्गवत आनन्द भोगते हैं।

(५६) बिलाव, भैंसा, भेड़ और काक तथा ओछे मनुष्य पर कदापि विश्वास न करे।

(५७) दुष्ट पुरुष मच्छरके समान सब कार्य करता है। जैसे दुष्ट पैरों पर गिरता है, इसी प्रकार यह भी गिरता है। दुष्ट पीठ पीछे बुराई करता है, वैसे ही यह भी पीठ पर काटता है। जैसे दुष्ट कानके पास मीठी मीठी बातें करता है, वैसे ही यह भी कानके पास विचित्र मधुर शब्द करता है।

(५८ दुष्ट का प्रियवादी होना, विश्वास का कारण नहीं। दुष्ट की जिह्वाके अग्रभागमें अमृत, परन्तु हृदय में हलाहल भरा रहता है।

(५९) सज्जन पुरुष नारियलके समान होते हैं; जैसे ऊपरसे कठोर और भीतरसे कोमल व मुलायम।

दुष्ट बेरके समान होते हैं ; जैसे बेर ऊपरसे ही मन-भावने होते हैं।

(६०) स्त्री-जाति की इज्जत बढ़ानी चाहिये और उन्हें उच्च कक्षा की अधिकारिणी बनाना चाहिये। स्त्री-जातिके हृदयमें एक ऐसी शक्ति पैदा करा देनी चाहिये, जिससे वह सदैव मनुष्य-जातिसे मिलके संसार की सच्ची उन्नति की सहायिका बनी रहे।

(६१) प्रीतिसे कहा हुआ सज्जनों का वचन जितना सुख पहुँचाता है, वैसा शीतल जलके स्नानसे, मोतियों की माला से और चन्दन के लेपसे, धूपके सताये को सुख नहीं पहुँचा सकता।

(६२) गुप्त बातोंको खोलना, धनादिक की याचना, कठोरता, चित्त की चञ्चलता, क्रोध, झूँठ और जूआ ये मित्रताके दूषण हैं।

(६३) पवित्रता, निष्कपटता, दानशीलता, शूरता, सुख-दुखमें समानता, अनुकूलता, प्रीति और सत्यता ये ही मित्रताके गुण हैं।

(६४) चतुरता और सत्यता यह तो बात-चीतसे जाने जाते हैं। नम्रता और शान्तता प्रत्यक्ष जाने जाते हैं।

(६५) दुर्जनोंके मनमें कुछ, बचनमें कुछ और कामोंमें कुछ ; किन्तु सज्जनोंके मनमें, बचनमें, कर्ममें तीनोंमें एक ही बात होती है।

(६६) जिस देशमें सम्मान पूर्वक आजीविका न मिले और कोई मित्र अथवा भाई बन्धु भी न हो, और न विद्याका लाभ हो, उस देश को छोड़ देना चाहिये।

(६७) जीविका, अभय, लज्जा, सज्जनता और उदारता ये जहाँ न हों वहाँ निवास न करे। और जहाँ वैद्य, वेदपाठी, धनवान और स्वच्छ जलवाली नदी न हो, वहाँ भी न रहै।

(६८) ब्राह्मणों को अग्नि, चारों वर्णों को ब्राह्मण, स्त्री को पति, और सबों को अभ्यागत पूज्य है।

(६९) धनसे रहित बुद्धिहीन मनुष्य के सब कार्य्य ग्रीष्म ऋतु की छोटी छोटी नदियोंके समान बिगड़ जाते हैं।

(७०) संसारमें जिसके पास धन है, उसीके मित्र और बान्धव हैं।

(७१) दरिद्रता और मरना, इनमें दरिद्रता बुरी है। कारण मरनेका दुःख एक बेर होता है और दरिद्रताका दुःख आजन्म भोगना पड़ता है।

(७२) चिन्ता और चिता इनमेंसे चिन्ता बुरी है। कारण चिता तो मृत देह को ही भस्म करती है, किन्तु चिन्ता सजीव देह को जला देती है।

(७३) आयु, धन, घरका भेद, गुप्त बात, मैथुन, औषधि, तपस्या और अपमान, इन बातोंको यत्नसे गुप्त रखना चाहिये।

(७४) प्रारब्ध के विमुख होने पर, पुरुषार्थ और यत्न करके निष्फल हो जाने पर, धर्मवान दरिद्री मनुष्य को बनके सिवाय और कहाँ सुख की प्राप्ति हो सकती है ?

(७५) जैसे बनके फूल या तो देवताके काम आते हैं या वहीं मुरझाकर रह जाते हैं ; ऐसे ही उदार पुरुषों की रीति होती है।

(७६) धनहीन प्राणोंको आगमें झोंक देना अच्छा, परन्तु मानको त्याग कर कृपणसे माँगना अच्छा नहीं।

(७७) निर्धनतासे मनुष्य को लज्जा आती है ; लज्जासे पराक्रम नष्ट हो जाता है ; पराक्रम नष्ट हो जाने पर अपमान होता है ; अपमानसे दुःख होता है ; दुखसे शोक होता है ; शोकसे बुद्धि नष्ट हो जाती है और बुद्धि के न रहनेसे मनुष्य का नाश हो जाता है। सच है, निर्धनता सब विपत्तियों की जड़ है।

(७८) चुप रहना अच्छा, परन्तु मिथ्या वचन अच्छा नहीं ; नपुंसकता अच्छी परन्तु पर-स्त्री-गमन अच्छा नहीं ; मरजाना अच्छा, परन्तु धूर्त की बात पर विश्वास करना अच्छा नहीं ; सूनी गोशाला अच्छी, प

मरखना बैल अच्छा नहीं; वेश्या स्त्री अच्छी, किन्तु कुलवधू व्यभिचारिणी अच्छी नहीं; बनका वास अच्छा, परन्तु अन्यायी राज्यमें रहना अच्छा नहीं; प्राण छोड़ देना अच्छा, परन्तु दुर्जन का संग अच्छा नहीं; भूखे मरना अच्छा, परन्तु अपमानसे पराये भोजनोंसे अपना पेट पालना अच्छा नहीं।

(७९) हलाहल पीकर मर जाना अच्छा, परन्तु भीख माँग कर पेट भरना अच्छा नहीं।

(८०) थोड़ा पढ़कर पण्डिताई, धन देकर मैथुन, पराये आसरेका भोजन, ये तीनों बातें निष्फल होती हैं।

(८१) रोगी, परदेशमें रहने वाला, दूसरेके सहारे भोजन करनेवाला तथा दूसरेके घर सोनेवाला, इनका जीना मरनेके समान है और मरना विश्राम-तुल्य है।

(८२) लोभसे बुद्धि चली जाती है, लोभ तृष्णा को बढ़ाता है और तृष्णासे मनुष्य इस लोक और परलोक दोनोंमें दुःख भोगता है।

(८३) जिसने धनियोंके द्वार पर जाकर समय नहीं बिताया, विरह का दुःख नहीं सहा, कभी दीन वचन मुखसे नहीं निकाले,—ऐसे मनुष्यका जीवन इस संसारमें धन्य है।

(८४) संसारमें प्राणियों पर दया करना ही धर्म

है; निरोग रहना ही सुख है; सत्कार पूर्वक मिलना ही स्नेह और ऊँच नीच सोच कर ही कार्य्य करना पण्डिताई है। विपत्तिके आ जाने पर निर्णय करके कार्य्य करना ही चतुराई है; क्योंकि बिना विचारे करनेसे पद पद पर विपत्तियोंका सामना करना पड़ता है।

(८५) हिंसक पशुओंसे भरे हुए बनमें वृक्षके नीचे रहना; पके हुए फल, फूल, कन्दादि खाकर जल-पान करना तथा घासके बिछौने पर सोना व बल्कल वस्त्र पहिनना अच्छा; परन्तु भाई बन्धुओंमें धनसे हीन होकर रहना अच्छा नहीं।

(८६) संसार रूपी विष वृक्षके दो ही रसीले फल हैं:—एक तो काव्यरूपी अमृतका पान और दूसरे सुजनोंका संग।

(८७) धन धूलि के समान है; यौवन पहाड़ी नदीके समान है; आयु चञ्चल जल-बिन्दुके समान है और जीवन फेनके समान है। इसलिये जो मनुष्य धर्म नहीं करता है, वह बुढ़ापेमें, पश्चात्ताप करता है।

(८८) जिस जिस धनको पृथ्वीमें अधिक नीचे गाड़ता है, वह धन पातालमें जानेके लिये पहिले ही से मार्ग कर लेता है।

(८९) जो मनुष्य धनको देवता, ब्राह्मण, भाई बन्धु आदिके अर्थ नहीं लगाता, उस कृपण का धन या तो जल जाता है या चोर ले जाते हैं वा राजा छीन लेता है; क्योंकि धनकी तीन गति होती हैं—दान, भोग वा नाश। जो न देता है न खाता है उसके धन की तीसरी "नाश" गति ही होती है।

(९०) प्रियवाणीके सहित दान, अहङ्कार रहित ज्ञान, क्षमा-युक्त शूरता और दान-युक्त धन ये चार बातें संसारमें दुर्लभ हैं।

(९१) संचय नित्य करना चाहिये, किन्तु अति सञ्चय अच्छा नहीं।

(९२) चतुर मनुष्य जो वस्तु दुर्लभ है उसकी चाहना नहीं करते और जो वस्तु नष्ट हो गई हो उसका सोच नहीं करते और विपत्ति-कालमें मोह नहीं करते।

(९३) राजा, कुल की बधू, ब्राह्मण, मन्त्री, स्तन, दन्त, केश, मुख और मनुष्य स्थान से अलग हुए शोभा नहीं पाते, यह जान कर मनुष्यको स्थान न त्यागना चाहिये; परन्तु ये कायर मनुष्योंका वचन ठीक नहीं। सज्जन, सिंह और हाथी ये स्थान छोड़कर सुखी हो जाते हैं और कायर पुरुष, काग और मृग ये स्थान पर ही नाश हो जाते हैं।

(९४) वीर और उद्योगी पुरुष को देश विदेश क्या ? अर्थात् जैसा देश वैसा ही विदेश।

(९५) जिस प्रकार मेंडक कूपके पासके पानी भरे गड्ढेमें और पक्षी भरे हुए सरोवरके पास जाते हैं; उसी प्रकार सम्पत्तियाँ स्वयं ही उद्योगी पुरुषके पास चली जाती हैं।

(९६) आये हुए सुख और दुःख दोनों भोगने चाहियें; क्योंकि सुख और दुःख पहिये के समान घूमते रहते हैं।

(९७) उत्साही, आलस्यहीन, कार्य्य की रीति जाननेवाला, सुपूत, क्रीड़ा आदि व्यसनोंसे रहित, शूरवीर, उपकार माननेवाला और परम मित्रतावाला ऐसे पुरुषोंके पास लक्ष्मी आप ही आप चली जाती है।

(९८) जो वीर पुरुष होता है वह बिना धनके ही अति सम्मान पाता है और कृपण, धनयुक्त होने पर भी, सर्वदा तिरस्कार पाता है।

(९९) बदली की छाया, खल की प्रीति, नया अन्न, स्त्रियाँ, यौवन और धन ये थोड़े दिनों तक भोगने योग्य हैं।

(१००) जिस प्रकार आकाशमें पक्षी, पृथ्वी पर सिंह, जलमें मगर माँस भक्षण करते है; उसी प्रकार धनवान को सर्वत्र लोग लूटते हैं।

(१०१) धनवानको राजासे, जलसे और अग्निसे और अपने स्वजनोंसे नित्य भय रहता है।

(१०२) महात्मा पुरुषोंका स्नेह मृत्यु तक, क्रोध क्षण मात्र तक, और परित्याग केवल संग रहित होता है; वे कभी किसी को बुराई नहीं करते।

(१०३) सज्जन ही सज्जन की विपत्ति दूर कर सकते हैं; जैसे कीचड़में फँसे हाथी को हाथी ही निकाल सकता है।

(१०४) पृथ्वी पर पुरुषोंमें वही प्रशंसा पाने योग्य है, वही उत्तम सज्जन पुरुष है और वही धन्य है, जिसके पास शरणागत व याचक लोग निराश हो विमुख नहीं जाते।

(१०५) स्वभावसे स्नेह करनेवाला मित्र प्रारब्धसे ही प्राप्त होता है, जो कि विपत्तिमें भी मित्रका साथ नहीं छोड़ता।

(१०६) न तो माता पर, न स्त्री पर, न सगे भाई पर, न पुत्र पर ऐसा विश्वास हो सकता है जैसा कि स्वाभाविक मित्र पर विश्वास होता है।

(१०७) जो निश्चित को छोड़ अनिश्चित पर आसरा करता है, उसके निश्चित कार्य्य नष्ट हो जाते हैं।

(१०८) जो मदिरा पी कर उन्मत्त रहते हैं, जो अपना सारा दिन निरर्थक खेलोंमें बिताते हैं, जो

अपने अवकाशके समय को बुरे व्यसनोंमें लगाते हैं, जो पर-स्त्रीसे बुरी बातें करते हैं, जो दुष्टजनों की संगतिमें रहते हैं, जो वेश्या को अपनी समझ उससे प्रेम करते हैं, जो जुआरियोंके साथ जूआ खेलते हैं,—ऐसे पुरुषोंके पास लक्ष्मी नहीं जाती।

(१०९) जो सदाचारी हैं और अपने समयको नष्ट नहीं करते, जो अपना दिवस पुस्तकाध्ययन और अपने कार्यों के करनेमें व्यतीत करते हैं, जो स्वजनोंके साथ प्रेम करते हैं, जो परिमित व्ययतासे रुपये बचा सूद पर देते हैं, जो लोग व्यवसाय करना जानते हैं, जो लोग अपने कामोंको बड़े उत्साहसे करते हैं, जो सज्जन किसी मादक द्रव्यका सेवन न करके अपने मस्तिष्क को स्वस्थ रखते हैं, उनके पास लक्ष्मी आप ही आप आती है।

(११०) सर्वदा उदार और कृपालु रहो।

(१११) बोलनेके पहिले खूब विचार करो।

(११२) अपने सिद्धान्तों पर दृढ़ रहो।

(११३) अपनी भूल को स्वीकार कर क्षमा माँगो।

(११४) अपने शत्रुसे उदारता का व्यवहार करो।

(११५) अपने व्यवसायमें सत्यतासे काम लो।

(११६) दुखियोंके साथ सहानुभूति रखो।

(११७) अपनी जिह्वा वशमें रखो।

(११८) लोगों की गपशप से कानों को हटाओ।

(११९) धर्म व ईश्वर पर विश्वास रखो।

(१२०) न्याय करनेसे पहिले सुन लो।

(१२१) इधर उधरके भिड़ानेवालों की बातों पर कदापि ध्यान न दो।

(१२२) हृदयमें उच्च विचार रखो।

(१२३) अपने बड़े भाई को पिता समान समझो।

(१२४) परोपकारी बनो।

(१२५) मन और इन्द्रियोंको अपने वशमें रखो और क्रोधके वश न होओ।

(१२६) सज्जनोंका संग करो।

(१२७) सत्य वचन आकाशसे भी बड़ा है।

(१२८) निर्दोषीको दोष देना, पृथ्वीसे भी भारी है।

(१२९) स्वार्थी पुरुष का हृदय पत्थर से भी कठोर है।

(१३०) ईर्षा अग्निसे भी अधिक दाहक है।

(१३१) सहनशीलता, बर्फ से भी अधिक शीतल है।

(१३२) दयावान, समुद्रसे भी अधिक उदार है।

(१३३) चुगली करनेवाला, अनाथ बालक से भी अधिक दुखी है।

(१३४) चतुर और विद्वान बननेके लिये, चतुर

और विद्वानोंका ही संग करना चाहिये, मूर्खों के संग मे इस लोक और परलोक का हित नहीं होता।

(१३५) मूढ़ लोग उपदेशकी निन्दा करते हैं जैसे मूर्ख रोगी औषधिको कड़वी कह कर सेवन नहीं करते।

(१३६) ईश्वरसे डरना, हमारे कल्याणका कारण है।

(१३७) दूसरोंकी निन्दा, पराये धनका लोभ, दूसरोंसे उपहास, पराये घरमें निवास और अपने दोषोंको त्याग देनेसे प्रशंसा होती है।

(१३८) दया और सत्यताको अपने गलेका हार बनाओ।

(१३९) अपनी बुद्धिको हमें अपनी हितकारिणी बहिन समझना चाहिये; उसकी बिना सलाह लिये कुछ भी न करो।

(१४०) बहुत सोनेसे कोई नींदको नहीं जीत सकता; अग्निमें अधिक ईंधन डालनेसे अग्नि नहीं बुझती; अधिक सुख भोगोंसे तृष्णा नहीं बुझती।

(१४१) अहंकारी आँखें, झूठी जीभ, बुरे विचार वाला मन और भाईसे ईई बैर करनेवाले मनुष्य ईश्वरको बुरे लगते हैं।

(१४२) वही मनुष्य संसारमें जीवित है जिसमें गुण हैं और जिसमें धर्म्म है। धर्म और गुणोंसे ह

मृतक के समान है; क्योंकि कुटुम्ब वाले हर समय उसका मरना ही मनाते हैं।

(१४३) जो व्यभिचारिणी स्त्रीके पास जा सुख उठाना चाहता है, वह उसी पुरुषके समान है जो गोदमें आग ले आग से बचना चाहता है। क्या कोई अङ्गारों पर चले तो उसके पैर नहीं जलेंगे?

(१४४) अभ्यास न करते रहनेसे गुण नष्ट हो जाते हैं; मलिन आचरणोंसे शोभा जाती रहती है। भोजन न पचनेसे रोग बढ़ते हैं और परिश्रम करनेसे दरिद्रता नाश होती है।

(१४५) वेश्याका घर नर्क का द्वार है और वेश्या नर्कका सोपान है।

(१४६) सुशीला स्त्री अपने पतिके लिये मुकुटके समान है।

(१४७) ऐसा कौन है जिस पर कभी विपत्ति न आई हो? राजाका प्रिय सदा कौन रहता है? कालके गालसे कौन बचा है? जिसके पास धन नहीं उसे कौन चाहता है? दुर्जनका साथ कर कुशलसे कौन रह सकता है?

(१४८) सचाई सदा स्थिर रहेगी, पर झूठ पल भर ही ठहरेगी।

(१४९) जो अपने पुत्रोंको ताड़ना करता है; वास्तवमें वही अपने पुत्रोंको प्यार करता है।

(१५०) नदियोंके समागमसे समुद्र तृप्त नहीं होता, सब प्राणियोंके संहारसे काल तृप्त नहीं होता। सज्जनोंकी बातोंसे चित्त नहीं अघाता। सुख और सम्पत्तिसे मनुष्य कभी नहीं अघाता।

(१५१) बुद्धिमान स्त्री अपना घर आप बाँधती है; पर मूर्खा उसे अपने हाथोंसे ढा देती है।

(१५२) नदी और नारियोंका समान स्वभाव है। नदीमें जल बढ़नेसे नदीके बीच और किनारोंका नाश होता है; इसी प्रकार स्त्रियोंमें अवगुण बढ़नेसे, कुल और जातिका नाश होता है।

(१५३) महात्मा पुरुषोंका जीवन हमारे लिये अञ्जनके समान है। उसके मनन व अनुसरण करनेमें, हमारे नेत्र दिव्य दृष्टि प्राप्त करते हैं।

(१५४) जिस वृक्षमें फल नहीं होते, उ छोड़ जाते हैं। सरोवरका जल सूखजाने पर वहाँसे उड़ जाते हैं। धन न रहनेसे हितु स्नेह देते हैं। बनके जलजानेसे मृग उसे छोड़ जाते हैं यह निश्चय होता है कि "संसार मतलबका

(१५५) सिर्फ दो कारणोंसे मनुष्य बड़े करलेते हैं (१) "शौक" (२) "डर"।

(१५६) मनुष्यके लिये धन ही सब कुछ है, इस लिये धनकी रक्षा मुख्य है।

(१५७) स्वास्थ्य-रक्षाके विचारसे एक मासमें एक या दो बार व्रत अवश्य करना चाहिये। "माईकेल-सोलिम" १८८ वर्षकी आयु पाकर मरा था। वह सप्ताहमें २ बार निराहार व्रत करता था।

(१५८) क्रोधसे मनुष्यकी शक्ति जाती रहती है, और उसका दबाव कोई नहीं मानता।

(१५९) सदैव इस बातका ध्यान रखो कि पुरुषार्थ बिना जीवन निस्सार है।

(१६०) लोभसे नाना प्रकारके भय आ घेरते हैं। चित्त चंचल रहता है तथा सुख और प्रसन्नताका लेश-मात्र भी नहीं रहता।

(१६१) हमारे शरीरका कुछ ठिकाना नहीं। जो कुछ करना है सो करते चलो।

(१६२) शील गुण होनेसे मनुष्य निष्पक्षपात हो जाता है और प्रत्येक अवस्थामें सन्तोष करता है।

(१६३) विनीत होनेसे मनुष्यको सुख और शान्ति प्राप्त होती है, चित्त स्थिर रहता है और सद्ज्ञानका विकाश होता है।

(१६४) निर अहङ्कार होनेसे, मनुष्य बहुत सुखी हो जाता है; उत्साह-सम्पन्न और सन्तुष्ट रहता है।

(१६५) इन्द्रियोंको अपने आधीन रखनेसे शान्ति प्राप्त होती है, शुद्ध विचार उत्पन्न होते हैं, मनुष्य सभ्य हो जाता है, उसका स्वास्थ्य अच्छा रहता है, तथा सर्वत्र आदर पाता है।

(१६६) तुम स्वतन्त्र होनेके लिये विद्वान और कला-कुशल बनो, न कि दासत्व और नौकरीके निमित्त।

(१६७) उत्तम कर्मोंका करना सुखकारी है और उन्हींका न करना पश्चात्तापकारी होता है।

(१६८) कुपढ़ होते हुए अपने आपको विद्वान प्रकट करना, दरिद्री होकर बड़े बड़े मनोरथोंकी चाह करना, बलवानसे शत्रुता करना, बिना बुलाये जाना, बिना पूछे बकना, निष्कारण क्रोध करना, ये लक्षण मूर्खोंके हैं।

(१६९) पुरुषोंका सब से प्रबल शत्रु क्रोध है और सब से बड़ी व्याधि लोभ है; इसलिये शत्रु व व्याधि से बचनेवाले पुरुषों को उचित है कि वे क्रोध और लोभ को त्याग दें।

(१७०) एकबार अपराध हो जाने पर पश्चात्ताप करो और बार बार उसका अवसर न आने दो।

(१७१) अच्छे मनुष्य को बुद्धि बल व उद्योग से सब वस्तुएँ सुलभ हैं।

(१७२) प्यारी से प्यारी वस्तु के लिये भी वचन भंग न करो और न झूठ का आश्रय लो।

(१७३) मनुष्य को सर्वदा अधर्मों से दूर रहना चाहिये ; क्योंकि यह शरीर आधि-व्याधि युक्त एवम् क्षण-भङ्गुर है।

(१७४) मादक द्रव्यका सेवन और जुआ का खेल,—ये सम्पत्ति, स्वतन्त्रता और मर्यादा के नाशक हैं।

(१७५) स्व-स्त्री, स्व-धन और भोजन इन तीनों में सन्तोषी रहना चाहिये। पढ़ना, जप और दान इन तीनों में असन्तोषी रहना चाहिये। "चाणक्य"।

(१७६) बिना प्रमाण किसी को दोष लगाना, सज्जनों के साथ बुरा बर्ताव रखना, राजभक्तों और देश-हितैषियों के कार्यों को सन्देह की दृष्टिसे देखना, अपने नाश का बीज बोना है।

(१७७) जो मनुष्य अपना कार्य छोड़कर दूसरों का कार्य साधन करते हैं, वही सत्पुरुष हैं, जो अपना पराया दोनोंका कार्य साधन करते हैं, वे सामान्य पुरुष हैं और जो अपने हित के लिये परकार्य नष्ट करते हैं, वे मनुष्यों में असुर हैं। "भर्तृहरि"।

(१७८) यदि तुम्हारे पूर्वपुरुषों का कोई सुकार्य अपूर्ण ही पड़ा हो, तो उसे यथाशक्ति पूरा कर, भागीरथ के समान कुलश्रेष्ठ कहाने की चेष्टा करनी चाहिये।

(१७९) दुष्टोंके साथ किये सैकड़ों उपकार नष्ट

हो जाते हैं, इसी प्रकार मूर्खों को दिये अच्छे अच्छे उपदेश भी नष्ट हो जाते हैं।

(१८०) यदि अपनी जीवन-वाटिका की शोभा चाहो तो उसमें 'स्वदेश प्रेम' का वृक्ष लगावो और उसे राष्ट्र-भक्ति के सुधा सम जल से सींचते रहो।

(१८१) वीर स्वयं अपने पराक्रम से अपना आधिपत्य जमा लेता है; जैसे वन-जीवोंने न तो सिंहका राज्याभिषेक किया, न और कुछ; परन्तु वह राजा बना रहता है।

(१८२) यदि तुम्हारी हानि से तुम्हारी जातिका उपकार और मृत्यु से देश का कुछ उद्धार होता हो, तो तुम हानिको लाभ और उस मृत्यु को जन्म समझो; क्योंकि देश के लिये मरना वास्तव में अमर होना है।

(१८३) सच्चे पुरुष की बात पर लोग बिना शपथ खाये ही विश्वास रखते हैं और झूठे का सैकड़ों शपथ खाने पर भी कोई विश्वास नहीं करता।

(१८४) जब चित्तमें लोभ, अन्याय और पाप की तरङ्गे उठ रही हों, तब किसी महा-पुरुष का जीवन-चरित पढ़ने लग जाओ या किसी प्रिय मित्र या आत्मज की मृत्यु का स्मरण करो।

(१८५) दुखी और रोगी को देख कर कदापि मत हँसो। सम्भव है कि काल वही दशा तुम्हारी भी हो।

(१८६) जो धन की खोज में अपनी आत्मा की शान्ति और उस परमात्माका चिन्तन खो देता है, उसे उस मूर्ख से कम न समझना चाहिये जो अपने घर सजाने का सामान घर बेच कर मोल लेता है।

(१८७) मृदु वचन व बुद्धिमानी से दान करने में उदारता विराजती है, न कि अधिक दान करने में।

(१८८) जो शिक्षक अपने शिष्यों को पुत्रवत न जान, उनके प्रति अपने कर्तव्य का पालन नहीं करता, उसे गुरु कहलाने का अधिकार नहीं है। उन शिक्षकों को जो अपने शिष्यों को सभ्य दृष्टि से न देख, स्वार्थवश परमार्थ का मार्ग नहीं दिखलाते, संसार में मुहँ नहीं दिखलाना चाहिये।

गोस्वामी तुलसीदासजी ने भी कहा है :—

"हरै शिष्य-धन शोक न हरई।
सो गुरु घोर नर्क महँ परई॥"

(१८९) परिश्रमी के लिये समय खज़ाने के लिये है और आलसी को बोझ के समान।

(१९०) प्रत्येक विषय पर गंभीरता से काम लेकर भली भाँति विचार करो। शीघ्रता से और बिना सोचे मित्र न बनाओ। जो बन चुके हैं, उन्हें शीघ्र ही मत त्यागो।

(१९१) निन्दा करनेवाले मनुष्य उन मक्खियों के

समान हैं, जो कि मनुष्य के सब अङ्ग छोड़ घाव पर ही बैठती हैं।

(१९२) एक झूठ बोलने के लिये सैकड़ों झूठी बातें बनानी पड़ती हैं; अतः मनुष्य को उचित है कि झूठ कदापि न बोले।

(१९३) बुद्धिमान देश-हित के निमित्त मान और अपमान का विचार त्याग यथाशक्ति देश-सेवा का व्रत पालन करते हैं।

(१९४) बने ठने मनुष्य दालचीनी के वृक्ष के तुल्य हैं; क्योंकि दालचीनी का छिलका ही भीतरी भागों की अपेक्षा मूल्यवान होता है।

(१९५) मनुष्यका मुख ही उसके गुणोंका सच्चा सूची-पत्र है। उसका भूत भविष्य उसके मुख परही दिखता है।

(१९६) जो मनुष्य अपनी भूल से शिक्षा नहीं लेता, वह महा मूर्ख है।

(१९७) वनमें रहने तथा मौनी होनेसे कोई मुनि नहीं होता। घरमें रह कर ही जो श्रेष्ठ कार्य करता है, वही साधु है। "महाभारत"।

(१९८) क्षमा बुद्धिमानों का अमूल्य भूषण है और ईश्वर-प्राप्तिका सुगम उपाय है।

"क्षमा खड्ग लीन्हे रहै; अरिसों कहा बसाय।
अग्निपरी तृण रहित थल, आपहु ते बुझिजाय॥"

(१९९) जो शत्रुको भी मित्र बनाना चाहें, उन्हें चाहिये कि किसी से बैर न करें; दान देवें; समय की मर्यादा न तोड़ें और सबके हित की बात कहें।

(२००) बुद्धिमान दूरसे ही बड़े बड़े कार्य कर डालते हैं; इसलिये बुद्धिमान के बड़े लम्बे हाथ होते हैं, ऐसा कहें तो अनुचित नहीं।

(२०१) अन्याय से पैदा किया द्रव्य वंशनाश कर देता है और न्याय से संगृहीत द्रव्य पुत्र पौतों तक रहता है।

(२०२) शत्रुको विजय करने के निमित्त उपकार का बाण ऐसा ही अचूक है, जैसा प्रज्वलित अग्निके शान्त करने में जल।

(२०३) दूसरोंके सुखों को देखकर डाह करनेवाले पुरुष सदा दुखी रहते हैं।

(२०४) जिस प्रकार भूमि से भारी माता और स्वर्ग से भारी पिता है; इसी प्रकार सब से हलका और नीच कर्म चाकरी करना और भीख माँगना है।

(२०५) रोग रहित रहना ही इस लोक में परम सुख है। कहा भी है "एक तन्दुरुस्ती और हज़ार न्यामत"।

(२०६) जिसके आज्ञाकारी पुत्र, मृदु-भषिणी नारी और धनदा विद्या हो, वही संसारमें पूरा सुखी है।

(२०७) अपने किसी समीपवर्ती की निन्दा मत करो। मित्रों की ज्योनार, नाच रंग आदि खुशी के अवसरों पर जाने में सङ्कोच करो, किन्तु उनकी आपत्तियों में बिना बुलाये अवश्य सम्मिलित हो।

(२०८) पर-स्त्रियों से अधर्म करना, दूसरे का धन ग्रहण करना, अपने मित्रों को छोड़ देना,—इन तीनों दोषों से मनुष्य का नाश हो जाता है।

(२०९) यदि तुम चाहते हो कि हमारी आज्ञा सब कोई माने तो, पहिले तुम औरों की आज्ञा मानना सीखो।

(२१०) अधर्म करने से पहिले तो वृद्धि होती है और पीछे सर्वनाश होजाता है। "मनु"।

(२११) जिस प्रकार रक्षकोंमें 'इन्द्र', भक्षकोंमें 'अग्नि' से बढ़कर कोई नहीं है; इसी प्रकार स्वर्ग और प्रतिष्ठा चाहनेवालोंमें, वही सर्व श्रेष्ठ है जो कि देश-भक्त है।

(२१२) विद्या व धनको पाकर अभिमानी उद्दण्ड हो जाता है; पर सज्जन पुरुष इसे पाकर नम्र होते हैं।

(२१३) रावणने रावणको मारा; रामने नहीं।

(२१४) अपने शत्रु और मित्रको सर्वदा अपनेमें ही देखना चाहिये।

(२१५) जो अपने जीवनका निरादर करता है, फिर उसका आदर कौन कर सकता है?

(२१६) बे-उपजाऊ भूमि खाद डालनेसे उपजाऊ हो सकती है; इसी प्रकार अपने स्वभावको सुधारनेसे मनुष्य धर्मात्मा हो सकता है।

(२१७) नर्क-द्वार बड़ा और सड़क चौड़ी होती है। उसमें जानेवाले भी बहुत होते हैं। स्वर्गका दरवाज़ा छोटा और सड़क तङ्ग होती है। वहाँ बहुत कम यात्री जाते हैं।

(२१८) स्त्री पुरुष जहाँ एक साथ प्रेमसे रहते हैं, वहाँ सर्वदा कल्याण रहता है।

(२१९) पुरुषकी उन्नति व अवनति स्त्री पर निर्भर है। यदि वह सुशिक्षिता है, तो पतिकी उन्नतिका कारण है और यदि मूर्खा है तो अवनतिका कारण होगी।

(२२०) संसारमें भाग्यवान वही है, जिसकी स्त्री प्रतिष्ठापन्न है।

(२२१) ऐश्वर्यकी कामना करनेवालोंको उचित है कि सत्कार और उत्सवके समयमें भूषण, वस्त्र और भोजनादिसे स्त्रियोंका नित्य प्रति सत्कार करें। "ऋ० द० स०"

(२२२) संसारका आनन्द एक शब्दमें है; वह शब्द "सुशीला-भार्या" है।

(२२३) जो अपनी स्त्रीकी प्रतिष्ठा नहीं करता, वह अपनी अप्रतिष्ठा अपने हाथसे करता है।

(२२४) जिसको पतिव्रता पत्नि प्राप्त हुई है, वह पुरुष इस जगमें धन्य है। उसका जीवन द्विगुण हो जावेगा।

(२२५) जैसे कमान और डोरीका सम्बन्ध हैं ; वैसे ही मनुष्यका सम्बन्ध स्त्रीसे है। यद्यपि डोरी कमान को झुकाती है ; परन्तु वह उसकी आज्ञा पालन सदैव करती है।

(२२६) यह संसार न तो भला है न बुरा है। जैसे अग्नि जब हमको उष्णता पहुँचाती है तब हम कहते है कि "अग्नि क्या ही उमदा चीज़ है।" और जब वह बदनके किसी भागको जला देती है तो हम उसको निन्दा करने लग जाते हैं। यही दशा इस संसारकी है।

(२२७) जितने भी शुभकार्य करोगे, उतना ही तुम्हारा अन्तःकरण शुद्ध होगा।

(२२८) अंगमें मर्यादा रहनी चाहिये। सांसारिक कार्य कुशलतासे करने चाहियें।

(२२९) कुलीन स्त्रियाँ लज्जासे शोभायमान होती हैं। स्त्रियोंका रूप एक "पतिव्रत" मात्र है।

(२३०) सदा स्वच्छतासे रहकर, मधुरतासे थोड़ा बोलना चाहिये। अभिमान व लड़ाई कदापि नहीं करनी चाहिये।

(२३१) स्त्रीको बिना पतिकी आज्ञाके घरसे बाहर पैर रखना, भयंकर अपराध किये के बराबर है।

(२३२) स्त्री को बचपनमें माकी शिक्षामें, यौवनावस्थामें पतिकी आज्ञामें और वृद्धावस्थामें पुत्रके आश्रय ही चलना चाहिये।

(२३३) पतिसे प्रेम करना, नौकर आदमियों पर दया करना, सासु ससुरसे नम्रतासे बर्ताव करना, जँवाईसे प्रेम रखना, वृद्धोंका मान रखना, सर्वदा प्रसन्न चित्त रहना,—ये लक्षण अच्छी स्त्रीके है।

(२३४) बाहरसे आये हुए पतिके साथ नम्रतासे भाषण करना, उसका सर्व प्रकार सत्कार करना, अपने अन्तःकरणमें उसके प्रति पूज्य बुद्धि रखना, स्त्रियोंको ये बातें सदैव ध्यानमें रखनी चाहियें।

(२३५) पतिसे कपट रखकर अच्छेको बुरा और बुरेको अच्छा करनेवाली, घरके पदार्थ चोर कर बेचनेवाली, लड़की पर विशेष प्रीति रखनेवाली,—ये लक्षण दुष्टा स्त्रियोंके हैं।

(२३६) सद्विवेकसे अच्छी बुद्धि रखो।

(२३७) जल्दी सोना चाहिये और जल्दी ही उठना चाहिये।

(२३८) जागते समय निठल्ले न बैठो, कुछ न कुछ उत्तम कार्य अवश्य करते रहो।

(२३९) सुन्दर स्वरूप की अपेक्षा सुन्दर स्वभाव अच्छा है। सुन्दर स्वरूप तो नेत्रोंको ही अच्छा लगता है, किन्तु सुन्दर स्वभाव पुष्प-गन्ध सम चित्तको भी हर लेता है।

(२४०) उदार एवं श्रेष्ठ विचार सदा मनमें रखो।

(२४१) मनुष्यका भूषण रूप है, रूपका भूषण सद्गुण है, गुणका भूषण ज्ञान है और ज्ञानका भूषण क्षमा है।

(२४२) अपने शरीरको कोई सा भी व्यसन मत लगने दो।

(२४३) इस बातका भली भाँति ध्यान रखो कि, कहीं अन्त समयमें यों न कहना पड़े कि "हाय! हमने जन्म लेकर क्या किया? इस दुर्लभ नर-जीवनको व्यर्थ ही बिता दिया।"

(२४४) जो सर्वदा अपने शरीरको साफ रखता है, उसे किसी प्रकारकी दूषित वायुका भय नहीं।

(२४५) जितना विश्राम अच्छा लगे उतना ही लो; न कम लो न अधिक।

(२४६) आज का काम कल पर कदापि नहीं छोड़ना चाहिये।

(२४७) मितव्ययी बनो ; मितव्ययतासे घर
लक्ष्मी निवास करती है।

(२४८) यत्न करना चाहिये, फल अवश्य मिलेगा
इसमें सन्देह नहीं।

(२४९) अपना काम करके चुपचाप बैठनेमें सम
धान न जानो।

(२५०) पैसा मिलना सहज है ; परन्तु उसका स
उपयोग करना कठिन है।

(२५१) जिसको बहुत पैसा मिलता है, उसक
बुद्धि समान नहीं रहती।

(२५२) छोटा या बड़ा कोई भी काम हो, कि
बिना कुछ भी नहीं होता ; इसलिये तुम सदा प्रय
करो, जिससे कि भाग्यवान बनो।

(२५३) जब तक चित्त सावधान नहीं रहता, त
तक सुख सन्तोष कुछ भी नहीं मिल सकता।

(२५४) प्रातःकाल उठना चाहिये, ईश्वरक
चिन्तन करना चाहिये और नित्य नियमानुसा
कुछ सुभाषित भी याद करना चाहिये।

(२५५) हमें अनेकानेक असुविधाओंका सामन
करना है। हमारे पुराने विचार, दरिद्रतासे टक्कर लेना
येही असुविधाएँ हैं।

(२५६) यह विश्वास करलो कि अपनी सामग्र

का उपयोग कर, दृढ़ निश्चयके साथ यदि उद्योग किया जावे और मिलकर एक विचारसे काम लिया जावे तो अवश्य सफलता प्राप्त होगी। "जस्टिस रानडे"।

(२५७) अपने विचार हर किसीसे मत कहो और बिना विचारे कोई काम भी न करो। मेल-जोल सबसे रखो; परन्तु किसीको मुँह न लगावो।

(२५८) जो तुम्हारे सच्चे मित्र हैं और जिनको तुम परीक्षा करचुके हो, उनके लिये अपने प्राण तुच्छ समझो। परन्तु 'साहब सलाम' होते ही किसी नये आदमीको मित्र मानकर दावतपर दावत मत देने लगो।

(२५९) पहिले तो किसीके झगड़ेमें हो मत पड़ो और यदि पड़ो, तो शत्रुको दाँत खट्टे किये बिना कदापि न छोड़ो; जिससे फिर कभी वह तुम्हारा सामना करनेका साहस हो न करे।

(२६०) अपनी आय देख कर व्यय करना चतुरोंका काम है।

(२६१) बातें सबकी सुनो; पर अपनी बातें सब आदमियों से कहते न फिरो। सबकी बातें सुन लो, परन्तु किसी बातका एक निश्चय न कर डालो।

(२६२) पोशाकें मूल्यवान हों, पर भड़कीली न हों; क्योंकि पोशाक से ही प्रायः मनुष्य के चाल-चलन

(२६३) किसीसे क़र्ज़ न लेओ; क्योंकि क़र्ज़ लेनेका प्राय: यही नतीजा होता है कि धनके साथ मित्रतासे भी हाथ धोना पड़ता है और क़र्ज़ लेनेसे कम ख़र्चका अभ्यास छूट जाता है।

(२६४) सौ बात की एक बात यह है कि, सदा सच्ची सीधी राह पर चलो। इससे तुम्हारे से किसी की बुराई न होगी। "शेक्सपियर"।

(२६५) मनुष्य को ईश्वरने फलाहारी बनाया है; क्योंकि दाँत जबड़े हाथ नाखून इसके सुबूत हैं। आप प्रश्न करोगे कि "क्या इनसे माँस नहीं खा सकते"? इसका उत्तर है कि, यदि ईश्वर माँसाहारी ही बनाता तो सिंहादि पशुओं के समान बनाता। परन्तु मनुष्य के सम्पूर्ण अंग बन्दरके समान हैं और बन्दर फल-भोजी है, न कि माँस-भोजी।

(२६६) यदि माँस ईश्वर-प्रदत्त भोजन होता, तो मुमकिन था कि वह भी अन्य माँसाहारी पशुओं की तरह माँसको कच्चा ही भक्षण करता—परन्तु मनुष्य-जातिको कच्चे माँससे सख्त परहेज़ है। माँस पकाना कोई कुदरती अमल नहीं है।

(२६७) मादक द्रव्य कदापि सेवन नहीं करनी चाहियें।

(२६८) हमारी जातिका भविष्य केवल इसी बात

पर निर्भर है कि, हम अपने कार्यों को परम उपयुक्त और सबसे अधिक आवश्यक बना सकेंगे वा नहीं; क्योंकि जो मनुष्य अपने परिश्रम से अपने निवास-स्थान और सहवर्तियोंके कल्याणके लिये उनको आर्थिक और नैतिक उन्नति करता है, वह पुरष्कारसे वंचित नहीं रह सकता।

(२६८) भाग्य बाज़ार के समान है। जैसे कुछ देर ठहरनेसे बाज़ारमें बेचनेके लिये लाये गये पदार्थों का भाव बहुधा घट जाता है; वैसे ही योग्य अवसर प्राप्त होने पर कार्यका निर्वाह न करनेसे भाग्य की कृपा कम हो जाती है। "लार्ड बेकन"।

(२७०) जिनके मनमें सदा शंक और शुबह लगा रहता है, उनको शक करने का एक न एक कारण मिल ही जाता है।

(२७१) प्रसिद्ध से प्रसिद्ध वीर की वीरश्री में मालिन्यता आ जाती है; अपार शास्त्रीय ज्ञान भी वायु समान तरल है; भीमसेन महा पराक्रमी का भी बल तुच्छ है; यदि ये तीनों बातें मनके शासनसे रहित हों।

(२७२) ज़िन्दगी एक बाज़ीके समान है। हारना जीतना तो हमारे हाथमें नहीं है, पर बाज़ीका खेलना हमारे हाथमें है।

(२७३) मूर्खों की बात पर विशेष

करना आवश्यक नहीं; पर पण्डित यदि मूर्खों की भाँति बात करे तो क्या करना चाहिये ?

(२७४) सत्यके सिवाय मिथ्या प्रशंसासे किसी की महिमा नहीं बढ़ सकती और इससे धर्म की प्रवनतिके अतिरिक्त उन्नति नहीं हो सकती।

(२७५) रुपया बे पैर चलता है। यह कौड़ीला साँप है। इसे आस्तीनसे निकाल दो।

(२७६) खेद की बात है कि लोग शरीर, बल पाकर भी कुछ काम नहीं करते। आलसी लोगोंको धनी भी जी खोल कर कुछ नहीं देते।

(२७७) उद्योगी पुरुषके अन्तःकरणमें प्रतिदिन कोई भला काम किये बिना सन्तोष नहीं होता। उद्यमी प्राणियों को सूर्य्य भगवान् स्वयं निरन्तर जगाते हैं, अर्थात् उद्यमी लोग सूरज उगते ही अपने अपने कामोंमें लग जाते हैं।

(२७८) चींटियें भी नित्य श्रद्धा सहित यत्न करके खाती हैं, तो मनुष्यके लिये कहना ही क्या ?

(२७९) सुख, दुःख, वृद्धि, क्षय, कीर्ति, अपकीर्ति सब मनुष्यों को अवश्य होती है; परन्तु सहनशीलतासे उन्हें सहन करना चाहिये। चन्द्रमा भी वृद्धि क्षयादि आपत्तियों को सहन करता हुआ भी, अपनी सहनशीलता नहीं छोड़ता।

(२८०) किसी [illegible] डर कर [illegible] छिपाये डर कर [illegible] हुए [illegible] चिह्न है।

(२८१) अगर कोई काम [illegible] है तो [illegible] तुरन्त सहायक है, तो वह एक मात्र दान है। [illegible]

(२८२) लेन देन बिन काम नहीं चलता और मनुष्य ऐसा कठोर है कि बिना ब्याजके रुपया नहीं देता; अतएव क़र्ज़ देने की आज्ञा जारी करनी पड़ी। "वेकन"।

(२८३) जो जन समुदाय कालान्तर में एकता का रूप धारण नहीं कर लेता, उसमें छिन्न-भिन्नता रहती है और जिस एकता का निर्भर जन-समुदाय पर होता है, वह निर्दयता कहाती है।

(२८४) सम्पूर्ण शरीर भी सुख का घर नहीं है। मस्तिष्क तथा बुद्धिमें भी सुख नहीं; क्योंकि पागल को क्या पागलपनमें सुख नहीं होता? प्राणमें भी सुख नहीं है। सुख का स्थान मनुष्यके अस्तित्वसे परे है।

(२८५) ज्यों ज्यों बालक अपनी छाया को पकड़ने दौड़ता है, त्यों त्यों वह आगे बढ़ती जाती है। इतनेमें माताने उसके हाथसे सिरको पकड़ लिया। छायमें भी वही रूप देख पड़ा और बालकने समझ लिया कि छाया को पकड़ लिया।

नरक का निर्णय मनुष्यका है। वास्तवमें उसीके भीतर स्वर्ग और नर्क हैं। "स्वा० रामतीर्थ"।

(२८६) तपस्वी वही है, जो सत्यता पूर्वक अपना कर्तव्य पालन करता है। लज्जवान वही है जो बुरे कर्मों से दूर रहता है।

(२८७) सच्चा कुटुम्ब वही है, जहाँ सर्वदा सुमति निवास करती है।

(२८८) सुपुत्र और सज्जन अपना वचन यावज्जीवन निवाहते हैं।

(२८९) जो मनुष्य अपने वचनोंसे पतित होता है, उसकी बातों पर विश्वास नहीं करना चाहिये।

(२९०) दुष्टों का संग सदा निन्दनीय है। किसी की बात काटना और बिना सोचे उत्तर देना, मूर्खों का लक्षण है।

(२९१) बहुत सी चीज़ों को यह संसार टोहता फिरता है और ठोकरें खाता फिरता है; क्योंकि राह बतानेके लिये उन्हें स्त्रियोंकी पूरी सहायता नहीं मिलती। "जान व्याज किनर"।

(२९२) सब कार्यों को समझकर नियमानुसार करना चाहिये। "बाइबल"।

(२९३) आनन्द पूर्वक रहना, अच्छे जीवन का विरोधी नहीं है। "अरिस्टमस"।

(२९४) मनुष्यका दुःख दूर करना, यह काम देवताओं का है; परन्तु यह स्त्रियोंमें अधिक पाया जाता है। "वलजाक"।

(२९५) ईश्वर ने बुद्धि की कोई सीमा नियत नहीं की है। उसने मृत्यु को ही इस संसारमें उसकी सीमा नियत की है। "वेक"।

(२९६) दस्तकार आदमी के कामके साथ खुशी भी शामिल रहती है। मनुष्य को और कोई काम पेट भरनेके लिये इतना सुखकारी नहीं है, जितना कि दस्तकारी। दस्तकारी से चाहे लाभ कम हो, परन्तु मनुष्य उस कार्य से सुखी और प्रसन्न रहता है। "स्टीवनसन"।

(२९७) क्या ऊपरी सजावट की इच्छा सदाचार कही जा सकती है? अवश्य! परन्तु इच्छा शुभवासना युक्त हो।

(२९८) व्यापार असलमें जागीर है और व्यवसाय लाभ और इज्जतकी जगह है। किसान जो खड़ा रह कर हल चलाता है; उस भले आदमी (जेन्टिलमैन) से अच्छा है जो घुटने टेक कर गिड़गिड़ाता है। "फ्रैंलिन"।

(२९९) सर्वदा श्रेष्ट कार्यों में अपने मनको प्रवृत्त करो; बुरे कार्यों से बचते रहो। सच्चा सुख प्राप्त करनेका यही सुगम उपाय है।

(३००) उस परम पिता जगदीश्वरको भूलो

रात्रि दिवस उसको याद रखो। उसके प्रेमसे गुणानुवाद गावो। उसने तुम हमको बनाया है। बारबार उसके चरणोंमें भक्ति पूर्वक अपना मस्तक झुकाओ।

प्रभु-प्रार्थना।

गणवर गणवर करतर चरण!
परपद शरण गजन पथ कथक!
अमदन! गतमद! गजकर यमत्त!
भ्रममय! जय जय घन बन दहन॥

समाप्त।

LESSON 4.—THE ALPHABET.

Capitals	Small Letters	Names	Capitals	Small Letters	Names
A	a	এ	N	n	এন্
B	b	বী	O	o	ও
C	c	সী	P	p	পী
D	d	ডী	Q	q	কিউ
E	e	ঈ	R	r	আর্
F	f	এফ্	S	s	এস্
G	g	জী	T	t	টী
H	h	এচ্	U	u	ইউ
I	i	আই	V	v	ভী
J	j	জে	W	w	ডব্লিউ
K	k	কে	X	x	এক্স
L	l	এল্	Y	y	ওআই
M	m	এম্	Z	z	জেড্

Obs.—After pupils have been thoroughly exercised in *describing*, *writing*, *naming*, and *distinguishing* the *capitals*, they should do the same with the *small* letters. The vernacular letters should be read only in their modified sounds as explained in Obs. 2, page 7.

Obs. 1.—Let children be exercised, for a short time, in the *sounds* and *powers* of vernacular letters, *as things quite distinct from the names.* Thus: ক as named = ক + অ; but the word কীট is never read as ক + অ + ঈট or কঈট. It is read simply as ক্ + ঈট, the vowel ঈ being joined directly to ক্, without the sound of অ. From other instances like the above, children should be made to see clearly that, in the vernacular alphabet, the *sounds* are things quite distinct from the *names*, except in the case of the vowels অ, আ, ই, &c., the names of which faithfully represent their *sounds.* Next, let children be told, that, in the English alphabet too, the *names* which they have learnt are not faithful representatives of the *sounds*, except in the case of the vowels *a*, *e*, *i*, *o*, *u*; and that, as in the vernacular, the *sounds* alone are thought of in *reading*, while the *names* are used in *spelling*. The sounds of the English letters should now be taught. Thus *B*, *named* বী, *sounds* like ব without the vowel sound of অ; *C*, *named* সী, *sounds* like ক্. (The hard sound of *c* and *g*, and the long or name sounds of vowels being only taught at this step, to avoid confounding children.) In exhibiting the sounds by vernacular letters, every care should be taken to make pupils read them only in their modified sounds, as explained in Obs. 2, page 7. The sound of *W* has been represented by ্ব, which the teacher should point out to be not the letter ব by itself, but ্ব as joined to another consonant preceding, as in শ্ব, হ্ব, &c.

2.—To enable children to name letters with accuracy, the teacher should show them clearly the positions of the tongue, the upper and lower lips, and the teeth in pronouncing them; and make his pupils imitate what he does, till they can pronounce every letter correctly and distinctly.

3.—While learning the sounds of letters, pupils should mark that *a*, *e*, *i*, *o*, *u* have full sounds of themselves without the aid of any other letter, and are called vowels; while *b*, *c*, *d*, &c., cannot be sounded without such aid, and are therefore named consonants; except *w* and *y*, when *w* sounds much like *u*, and *y* like *i*, for then they are vowels like *u* and *i*.

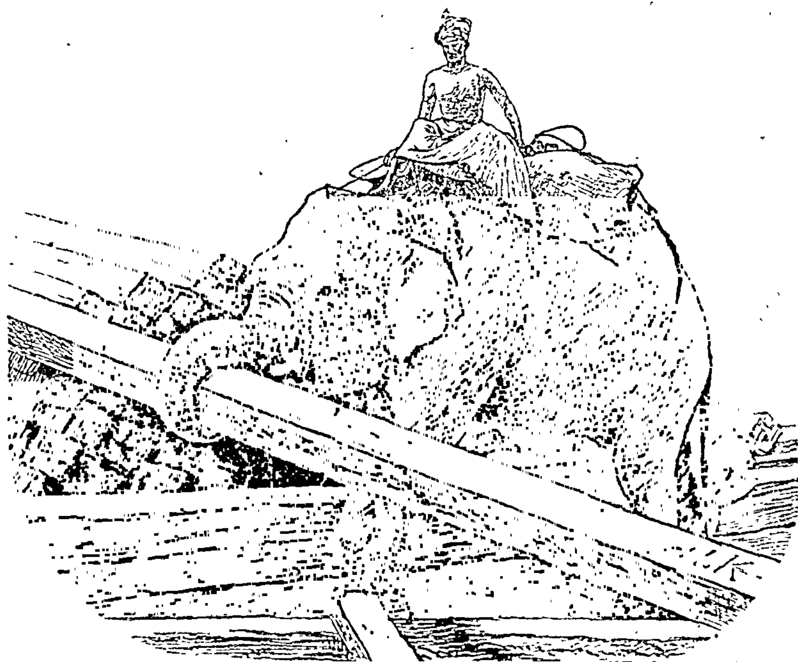
LESSON 7.—LONG SOUNDS OF VOWELS PRECEDED BY A SINGLE CONSONANT.

		a এ-ে	e ঈ-ী	i আই	o ও-ো	u ইঈ	y আই
b	ব্	ba	be	bi	bo	bu	by
c	ক্	ca	—	—	co	cu	—
d	ড্	da	de	di	do	du	dy
f	ফ্	fa	fe	fi	fo	fu	fy
g	গ্	ga	—	—	go	gu	—
h	হ্	ha	he	hi	ho	hu	hy
j	দ্	ja	je	ji	jo	ju	jy
k	ক্	ka	ke	ki	ko	ku	ky
l	ল্	la	le	li	lo	lu	ly
m	ম্	ma	me	mi	mo	mu	my
n	ন্	na	ne	ni	no	nu	ny
p	প্	pa	pe	pi	po	pu	py
r	র্	ra	re	ri	ro	ru	ry
s	স্	sa	se	si	so	su	sy
t	ট্	ta	te	ti	to	tu	ty
v	ভ্	va	ve	vi	vo	vu	vy
w	ব্	wa	we	wi	wo	wu	wy
y	য়্	ya	ye	yi	yo	yu	—
z	জ্	za	ze	zi	zo	zu	zy

[A piece of wood like the border of a slate, fitted with a handle and having a groove sufficiently deep to hold letters in a vertical position for exhibition, is the only apparatus required.]

Obs. 1.—The letter *a* should be first held up, and the pupils asked to *name* and *sound* it. Let it be placed on the grooved stick and its representative এ written on the board. Next, let the letter *b* be shown, *named, sounded,* and placed on the grooved stick before the letter *a*, while its representative ব্ is written on the board before এ. Pupils should now see that *b* + *a* sounds like ব্ + এ, or ব্ + ে or বে. Next, let the letter *b* be taken away from the grooved stick, and the letter *c* put in its place, after being *named* and *sounded;* children should now be told that *c* + *a* sounds like ক্ + এ, or ক্ + ে or কে. The long sound of *a* should be explained in the same manner with every other consonant. After pupils have learnt the long sound of *a* with each of the consonants before it, the long sounds of *e*, *i*, *o*, *u*, *y*, should be explained in a similar manner, noting that *y* here sounds like *i*, and is a vowel.

2.—Intelligent children hardly require all this care. Many of them catch the sounds of the vowels merely from a careful reading of the columns in the lesson five or six times.



Lesson 8.

We do. By me. Do so to me.

I go. Ye do so. To be.

Obs. 1.—Pupils should be told that *to* and *do*, when words by themselves, sound like *too* and *doo.*

2.—After pupils have read and explained the above phrases, the teachers should, from these and other similar phrases, such as, 'I do,' 'We go,' 'Ye be so,' &c., clearly convey to his pupils the meanings of *I, be, do, go, he, me, no, so, to, we, ye, my, by.*

Lesson 9.—LONG VOWEL SOUNDS PRECEDED BY DOUBLE CONSONANTS

Obs. 1.—Let the first consonant, for instance, *b*, be exhibited on the grooved stick, *named* and *sounded*, and its representative ব্ written on the board. Next, let *l* be *named, sounded*, and placed on the grooved stick after *b*, while its representative ল্ is written on the board below ব্. Pupils should now see that *bl* is the same as ব্ল্. Lastly, let *a* be *sounded* and placed on the grooved stick after *bl*, and its representative এ written after ব্ল্. Pupils should now be told that *bla* sounds like ব্ + ল্ + এ, or ব্ল্ + এ, or ব্ল + ে or ব্লে.

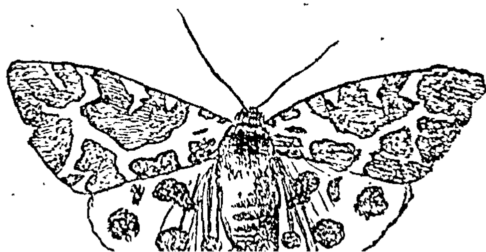
2.—To make it more impressive, the teacher may, as in Lesson 7, hold up the letter *a* first. After it has been placed on the grooved stick, and its representative এ written on the board, *l* may be taken up, *named, sounded*, and put on the grooved stick, ল্ being written on the board before এ; and let *la* be sounded. Lastly, let *b* be *named, sounded*, and placed before *la*, while its representative ব্ is written before ল্. Then let pupils see that *bla* = ব + ল + এ, or ব্ল্ + এ, or ব্ল + ে or ব্লে.

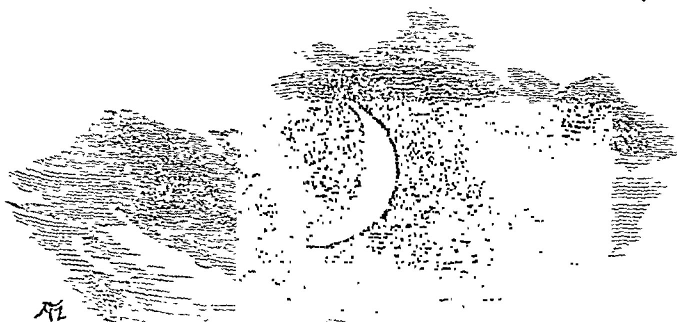
3.—The teacher should go over every line of the lesson in the above way, and show the combined sounds of *cla, cle, cli*, &c., *gla, gle, gli*, &c., after *bla, ble, bli*, &c., and *dra, dre, dri*, &c., *fra, fre*, &c., after *cra, cre*, &c., and so on with other sets of double consonants.

4.—Care should be taken to see that the sounds of the two consonants *flow into each other*, and that no vowel-sound be interposed between the two, as *ba-la* in *bla*.

5.—Indian boys often sound short *e* before *s* in reading *sma, spa*, &c., as if they were *esma, espa*. This should be corrected by the teacher.

6.—*Ch* like *tsh* should be noticed here, and the sound of *sh* distinguished from that of *s*. The sharp and flat sounds of *th*, and that *who*, when a word by itself, sounds like *hoo*, should be here explained.





Lesson 10.

I try. A fly. The sky. We cry.

Obs.—Other phrases like these should be framed by the teacher, and then by the pupils, and explained, so as to illustrate the meanings of several words like the above. Distinct articulation and careful reading should be attended to.

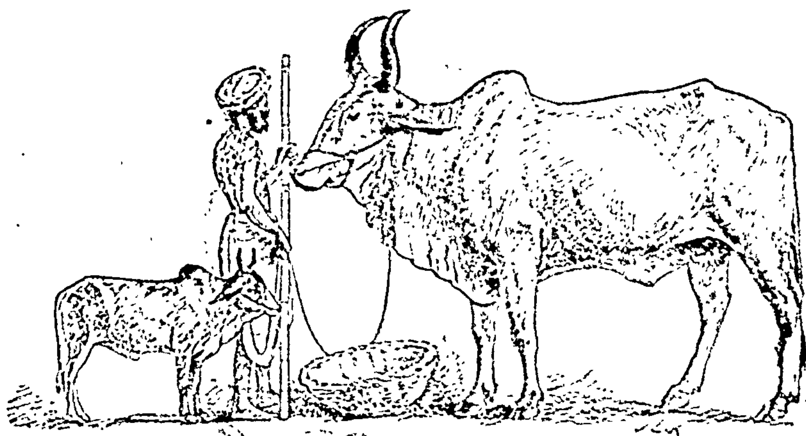
Lesson 11.—VOWELS FOLLOWED BY SINGLE CONSONANTS.

a ্যা	e এঃ	i ইঃ	o অ	u অঃ	*Conso-nants.*
ab	eb	ib	ob	ub	b
ac	ec	ic	oc	uc	c
af	ef	if	of	uf	f
ag	eg	ig	og	ug	g
am	em	im	om	um	m
an	en	in	on	un	n
as	es	is	os	us	s
ax	ex	ix	ox	ux	x

Obs. 1.—Pupils should be told that the vowels *a, e, i, o, u* have other sounds than the *long* or *name* sounds already learnt. Let the *short* sound of each of them be explained, taking care to observe that the

Bengali letters এ, ই and অ, if pronounced with one quick impulse of the voice as if they had been followed by ঃ will represent short *e*, *i*, and *u*, otherwise not. Let the letter *a* be placed on the grooved stick, and its *short* sound pronounced, its representative এ্যা being written on the board. Next let *b*, after being *named* and *sounded*, be placed on the grooved stick after *a*, while its representative ব is written after এ্যা; and then let children see that *ab* sounds like এ্যা ব্. Let the process be repeated for *ac*, *af*, *ag*, &c.; then for *eb*, *ec*, *ef*, &c., *ib*, *ic*, *if*; *ob*, *oc*, *of*; *ub*, *uc*, *uf*, &c., and for other syllables than those given in the lesson.

2.—Pupils should be told that *as*, *is*, and *of*, when words by themselves, sound like *az*, *iz*, and *ov*.



Lesson 12.

We go in.
I am up.
He is to go.
Do as we do.
Do so to us.
As he is, so I am.

He is in it.
We go to it.
If we be in it.
Is it an ox?
It is dry.
Am I in, or is he in?

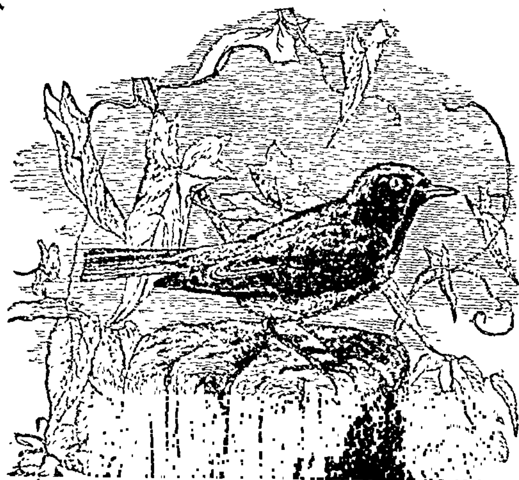
Obs.—Other phrases, such as, 'He is up,' 'It is my ox,' 'If I go to it,' etc., should be framed first by the teacher, and then by the pupils, and the meanings of the words *if*, *of*, *am*, *an*, *or*, *as*, *us*, *on*, *at*, *in*, *ox*, *up*, [illegible] arly explained and illustrated.

LESSON 13.—SHORT VOWEL SOUNDS IN WORDS OF THREE LETTERS.

ă-ad	dad	fag	dam	pan	sap	mat
	pad	rag	ham	tan	map	vat
ĕ-ed	led	keg	ken	bet	jet	yet
	fed	peg	fen	set	pet	yes
ĭ-ib	rib	hid	big	sip	fit	dim
	nib	lid	rig	tip	hit	rim
ŏ-ob	mob	pod	bog	top	lot	for
	rob	sod	fog	sop	pot	nor
ŭ-ud	bud	dug	hum	tun	nut	tub
	mud	jug	sum	fun	cut	rub

Obs. 1.—The short vowel sound should be first pronounced, then the combined sound of the vowel and the following consonant, and then the whole.

2.—Children should be made to frame and spell other similar words.





Lesson 14.

The ram.	A rib.	My bag.	The rod.
A hog.	My leg.	A pot.	Ten men.
The pen.	The gun.	A pig.	The fur.
A bud.	The pin.	A rat.	

Go to bed.
Who can run?
Sit by me.
It is a mad dog.
He is a bad lad.
She has a red cap.
Why is she so sad?
Who has got my top?
He can dig.
The sun is set.
My net is wet.
He had a fat nag.
She has a pet cat.
It is a tin box.
The cup is not hot.
Get a bat for him.

Obs.—Children should be exercised in explaining other phrases like the above, such as 'Get my rod,' 'It is his pen,' 'Let us go to him,' 'My top is red,' 'The dog bit my leg,' etc.

Lesson 15.

Hem is ill. Let him sit on my lap. Do not vex him.

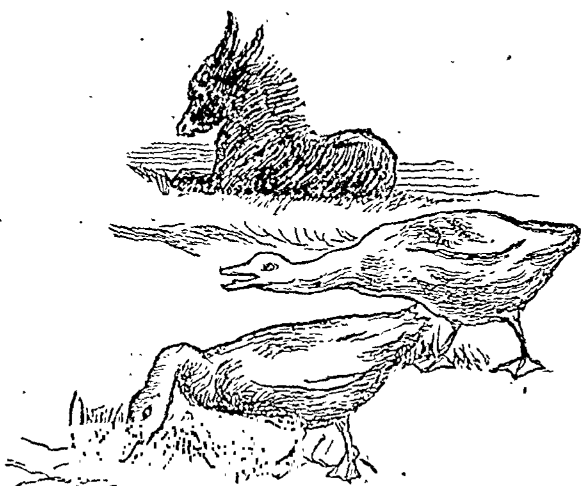
Bid a man go to the kid; it is in a pit. I can-not get up.

A sly fox met a hen. He ran to her, but the hen got on the top of a hut. She can fly, but the fox can-not.

LESSON 16.—VOWELS FOLLOWED BY TWO CONSONANTS.

a ্যা	*e* এঃ	*i* ইঃ	*o* অ	*u* অঃ	*Double Consonants.*
and	end	ind	ond	und	nd
ant	ent	int	ont	unt	nt
alt	elt	ilt	olt	ult	lt
apt	ept	ipt	opt	upt	pt
ack	eck	ick	ock	uck	ck
ang	eng	ing	ong	ung	ng
ash	esh	ish	osh	ush	sh
ass	ess	iss	oss	uss	ss
ath	eth	ith	oth	uth	th
ast	est	ist	ost	ust	st

Obs.—As in Lesson 11, let the vowel *a*, and then the consonants *n* and *d*, be successively *named*, *sounded*, and exhibited on the grooved stick, while their representatives ্যা ন্ and ড্ are written on the board. Then let pupils see that *a n d* sound like ্যা + ন্ + ড্ or ্যা + ন্ড, or ্যান্ড. Let the short sounds of the other vowels be similarly explained and illustrated.



Lesson 17.

An ass.	My arm.	The end.	Ask him.
An ant.	Thy ink.	The egg.	She is ill.

Lesson 18.—SHORT VOWEL SOUNDS PRECEDED BY DOUBLE CONSONANTS.

cram	bred	brim	clot	glut
gram	fret	grim	plot	slut
clap	stem	clip	clog	shun
slap	step	slip	flog	stun
clan	bled	grin	crop	shut
an	fled	shin	prop	drum

LESSON 19.—SHORT VOWEL SOUNDS PRECEDED BY A SINGLE CONSONANT, AND FOLLOWED BY TWO.

cant	bent	list	bond	buff
pant	rent	mist	pond	puff
pack	best	hiss	toss	hull
sack	test	miss	moss	lull
gash	felt	hill	mock	buck
lash	melt	fill	rock	luck

LESSON 20.—SHORT VOWEL SOUNDS PRECEDED BY TWO CONSONANTS, AND FOLLOWED BY TWO.

bland	blend	brick	broth	blunt
gland	spend	trick	froth	crush
brand	crept	smith	scorn	blush
grand	stept	stint	scoff	crust
grant	blest	stilt	cross	drunk
drank	crest	think	frost	grunt

LESSON 21.—SHORT VOWEL SOUNDS PRECEDED BY THREE CONSONANTS.

scrap	shred	shrimp	strong	shrub
strand	thresh	strict	throng	shrunk
strap	strest	string	throb	sprung
thrash	strength	thrift	strop	thrust

LESSON 22.—SHORT VOWEL SOUNDS FOLLOWED BY THREE CONSONANTS.

branch	stench	filch	storms	bunch
hands	belch	filth	scorch	burst
thanks	depth	pinch	torch	grunts
lamps	smells	midst	north	durst

Obs.—Children should be well exercised by numerous other examples, to read and spell, with facility, words like the above.

LESSON 23.

A cock has wings.
Do not hurt me.
Mend my pen.
Drink the milk.
Ring the bell.
The grass is soft.
This spot is damp.
Pick up the brick.
Bring my silk dress.
He went to his shop.
A fish has fins.
He has got six plums.
Sham is a rich man.
Stand up on the bench.
Wish to be just.
This is my left hand.
Can he sing? No.
I kept it on the dish.
The duck can swim well.
Do not pinch him.

LESSON 24.

Ram is ill. His skin is hot. I will not let him run in the sun. He must sit still. He must put on a warm dress. He is a small child, and we must be kind to him. He has slept long. I trust he will get well.

Obs.—Children should be well exercised in reading and explaining short sentences like those in the lesson, framed with the words they know, and with others suggested by the teacher.

LESSON 25.—SCRIPT LETTERS.

A B C D E F

G H I J K L

M N O P Q R

S T U V W

X Y Z

a b c d e f g h i

j k l m n o p q

r s t u v w x y z

1 2 3 4 5 6 7 8 9 0.

Lesson 26.—FINAL *e* GENERALLY LENGTHENS VOWEL SOUNDS.

ă	ā	ĕ	ē	ĭ	ī
dam	dame	met	mete	din	dine
tap	tape			sit	site

ŏ	ō	ŭ	ū
rob	robe	tub	tube
for	fore	tun	tune

Obs.—Other similar instances should be given.



Lesson 27.

I gave him the tape.
He met us in the lane.
The fire smokes.
The sun shines.
Make a cage.
There is a tube.
That lad stares.
Wine made him mad.
Can we not get a cane?

We dine at home.
I rode the mare.
He is in a bad state.
Take my rod.
I came late.
Kites rise to the sky.
We had a fine mare.
Here is a tame hare.
There is a nice car.

Obs.—Pupils should be told that *c* and *g* have other than the hard sounds of ক and গ, and that they are generally soft before *e*, *i*, *y*, and sound like স and জ, as in *nice*, *cage*, *gin*, &c.

Lesson 28.

A cur bit a dame ; but we hope, with care, to cure her of the bite.

Life is short. We must not waste time. Let us make the best use of it, while we have it.

Raman has slept long. He must rise from his bed, and wash his face. Then let him take his slate, and write.

Lesson 29.

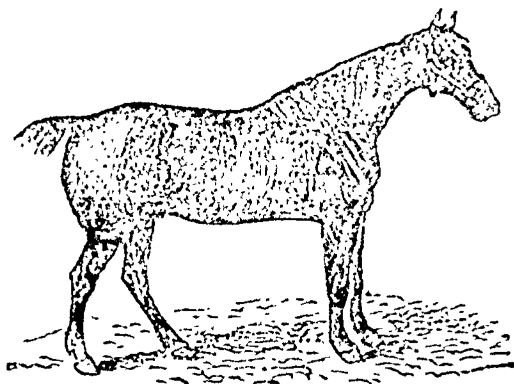
Where final e *does not lengthen vowel sounds.*

come	done	none	dove	have	give
some	gone	glove	love	one	live

Lesson 30.

Come to me.	Get my gloves.
Is he gone?	Love all men.

The old man has done his work. Give him a cloth, and some pice. He has none. He lives where we live. He has no one to help him. Thank God that we are not in want.



Lesson 31.—THE LAME MAN.

One morn I met a lame man in a lane close to my farm. He had not gone far when his stick broke. He sat by the side of a white gate, and he was sad. There was none to help him, and he sat still for some time. Then a brave lad came to the place on the back of a black mare. He made the lame man ride on the mare, while he went by his side to his hut, which was one mile off. When the lame man came home, he was glad, and blest the lad for what he had done. God will love the lad, and give him His grace.

Obs.—How final *e* lengthens vowel sounds, and how in a few words it does not, should be clearly illustrated.

CHAPTER II.

ALL THE SOUNDS OF VOWELS.

LESSON 1.—SOUNDS OF *a*.

a long.	*a short.*		*a broad.*	*a middle.*	
bake	band	cash	hall	bask	pass
shave	land	dash	fall	hark	mast

Obs.—The long, broad, short, obscure, and obtuse sounds of the different vowels, as given in this and the succeeding lessons, should be distinctly shown at the beginning of each lesson, and the pupils exercised in them, being asked to spell other words than those given here.

LESSON 2.

Wash the sand.
Call him to the wall.
The farm has a barn.
He is a tall man.

Make haste.
Take the grapes.
Catch that ball.
I will save him.

It is dark. We shall have a hard gale. Let us go back as fast as we can. Call at the gate. The man in the hall will take us in.

LESSON 3.—SOUNDS OF *e*.

e short.			*e long.*		*e obscure, like short u.*
hell	bend	lest	eve	here	germ
fell	rend	nest	mete	mere	fern

Lesson 4.

The left leg.
A short neck.
He is a mere lad.
He is pert.
I went to her.
Where is the bell?

He will help me.
This is her best dress.
Will he lend me his belt?
I felt well.
Will he sell his desk?
Send her to get a pen.

Lesson 5.—SOUNDS OF *i*.

i short.		*i long.*		*i like short u.*	
kiss	live	bind	tile	sir	firm
hill	mint	find	while	fir	dirt

Lesson 6.

I will give him my mill.
He is a kind and wise man.
She is a fine girl.
Let me have a pen, Sir.
He will give me a nice bird.
I will mind what he tells me.

Lesson 7.—SOUNDS OF *o*.

o long.		*o short.*		*o like short u.*	*o like oo.*
note	gold	loss	cord	some	move
toll	told	blot	born	none	lose



Lesson 8.

Do not move.
Lose no time.
There is a frog.
This stone is hard.
We sold the box.
Here is a dove.

Let us go home.
Hold the rose to my nose.
I love a bold man.
Give the bird some corn.
It will come from its nest.
My horse is in the pond.

Lesson 9.—SOUNDS OF

u short.			*u obtuse.*	*u long.*	*u like oo.*
puff	stud	dust	full	muse	lute
stuff	burnt	rust	bush	fume	rule

Lesson 10.

Tune the harp.
Do not run.
Cut the vine.
The bull runs.
Burn the husks.
The bird has fine plumes.
Do not be rude.

Put the gun here.
I can not rule him.
Be sure to tell the truth.
Do not push me.
The tube is full of dust.
Do not hurt it.

Obs.—Pupils should occasionally write out short sentences from dictation.

LESSON 11.—DIPHTHONGS.

Obs.—Dipthongs should be first explained, and then illustrated from the following words, as well as from others suggested by the teacher, or framed by the pupils themselves.

ai

rain	laid	ail	wail	faint	pair
brain	paid	sail	swain	paint	fair

au

daub	gauze	taunt	fault	fraud
laud	pause	daunt	vault	cause

aw

awl	thaw	dawn	caw	saw
crawl	draw	fawn	law	raw

ay

lay	pay	ray	stay	spray	bray
hay	say	pray	slay	stray	gray

LESSON 12.

Clay is soft and cold.
This chair is not old.
He lost his shawl.
That lad is vain.

He went up stairs.
Do not yawn.
Chide him for his fault.
Let us pray to God.

The air is fresh, and the bird is gay. The dawn is fair. There is no rain or hail. I saw a fawn play on the lawn. Here is a gray cat. Do not pull her by the tail; it will give her pain.

LESSON 13.

ea like long e.		*ea like short e.*	*ea like short u.*	*ea like long a.*
pea	lean	bread	search	break
tea	plead	dead	pearl	pear

ea like the middle sound of a.

heart

ee like long e.

flee	been	meet	meek	heed	beer
glee	seen	sleet	seek	reed	cheer

ei like long e.	*ei like long a.*			
ceil	*h*eir	ei*gh*t	feint	vein
seize	their	fei*g*n	rein	veil

ew like u long.			*ew like oo.*		
new	view	mew	brew	flew	strew
few	dew	stew	threw	slew	shrew

eu

r*h*eum fend deuce

ey like long e.	*ey like long a.*		
key	grey	prey	whey



Lesson 14.

The deer has horns.
His heel was sore.
Trees are green.
Steel is hard.
May he eat meat?
I feel that my heart beats in my breast.
The seed grew on the earth.
He must work, that he may earn his bread.
Do not tread on the worm.
He went to see the bees in the hive.
Last week, I saw a new screw.
It is sad to be deaf.
To steal is a sin and a crime.

Lesson 15.

ie like long i.	*ie like long e.*			*ie like short e.*
fie	chief	shield	pierce	friend
tie	fief	wield	fierce	

Lesson 16.

She is my niece.
He is my friend.
Vie with him.
Seize the thief.
Tie my cap.
All men must die.

I had a piece of land.
This is a nice field.
It yields rich crops.
The time of spring is brief.
Rice is our chief food.
Do not tell a lie.

Lesson 17.

oa

boat	load	boast	foam	foal
coat	road	toast	roam	goal

oe

foe	doe	roe	hoe	toe

oi

boil	soil	coin	spoil	poise	hoist
coil	toil	join	broil	noise	point

oo

too	look	boot	broom	hood	moon	door
coo	nook	root	groom	good	spoon	floor

ou

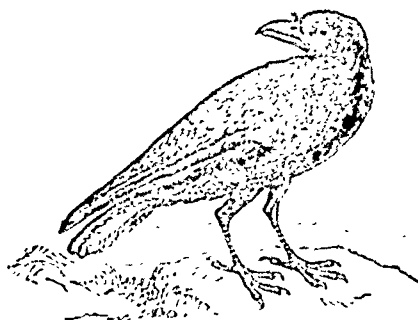
loud	hour	soup	your	four	ought
stout	sour	wound	tour	mourn	fought

ow

now	owl	grown	brow	flow
how	growl	sown	prow	glow

oy

boy	coy	joy	toy	Troy



Lesson 18.

The coach is on the road.
Come to my house.
Boys love noise.
His boat is on the sea.
He loads his gun.
The rook is black.
My shoes are too small.
Blood flows in my veins.
A cook roasts food.
Let her clean the floor.

A cloud hid the sun.
This soil is moist.
Hate no one.
They are poor.
He is a fool.
How do you do?
The cock crows.
Mow the grass.
Show me your toys.
Do not throw stones.

If you wish to be stout and strong, get up at five, go to bed at nine, keep your skin clean, eat plain food, breathe pure air, and play for some time at the end of school hours.

Obs.—Pupils should be often exercised in explaining other phrases like those in the lesson, and in translating into English such vernacular phrases as can be translated with the words they have learnt.

Lesson 19.

ua

quake	quack	guard	quart	quaff

ue

blue	due	hue	rue	true

ui

quick	guilt	quire	guide	suit

Lesson 20.

A blue quilt.
Give some good fruit to your guest.
Be on your guard, that he may not cheat you.
He is full of guile.
Is it true that he beats cats and dogs?
Pray tell me how they make glue.

Lesson 21.

wa

swarm	thwart	dwarf	twang

we

swell	dwell	dwelt	swept	twelve

wi

twin	twist	swine	swing	twirl

Lesson 22.—TRIPHTHONGS.

awe view swear squeak quaint

Lesson 23.

The Queen is good.
There was a swarm of bees where he dwelt.
Give to all what you owe them.
Do not swear.
The mouse squeaks.
Man must earn his bread by the sweat of his brow.
He is in awe of her.



CHAPTER III.

SOUNDS OF CONSONANTS.

B.

babe bleat blab brick bribe crib

b silent.

lamb debt dumb comb numb thumb

C soft before e, i, y.

cell fence peace cite cyme

c hard before a, o, u, r, l, t.

cape cost curd crape clock fact

ch like k.

chord choir chasm scheme school

D.

date deck dire dome dust bard

d silent.

judge grudge pledge ridge badge

F.

fire stiff safe fell left self

G soft before e, i, y.

germ gem gin gyve George

g hard before a, o, u, l, r, and at the end of words.

gape gore gust gloom groom drag

g silent before n.

gnaw gnat sign feign reign

g followed by h.

blight fight caught laugh cough

H.

hark hinge hind hoarse huge

h silent.

heir hour

J.

jump joint joke junk joust

K.

kirk keel stork trick skill

k silent before n.

knee knife knell know knob

L.

lair lone glean health peel

l silent.

talk folk balm half yolk would

M.

mart moist dream helm fame

N pure.

none noon nose pond lent pint

n ringing.

fling long king tank pink monk

P.

pipe paste priest damp rope

p mute.

psalm tempt prompt

p followed by h like f.

phase phrase phlegm

Q.

quick qualm quash quay* queen

R.

road rear realm brine train strap

S.

sew sound slight brass tongs case

s like z.

nose tease ease please rise praise

s followed by h.

sash flush shark trash short

T.

trite taste trace stock tract

t silent.

scratch thatch match witch switch

* Pronounced like *key*.

N pure.

none noon nose pond lent pint

n ringing.

fling long king tank pink monk

P.

pipe paste priest damp rope

p mute.

psalm tempt prompt

p followed by h like f.

phase phrase phlegm

Q.

quick qualm quash quay* queen

R.

road rear realm brine train strap

S.

sew sound slight brass tongs case

s like z.

nose tease ease please rise praise

s followed by h.

sash flush shark trash short

T.

trite taste trace stock tract

t silent.

scratch thatch match witch switch

* Pronounced like *key*.

th sharp.

thank pith thread birth mirth

th flat, like dh.

that this with though bathe breathe

V.

valve vile verb prove dive vent

W.

wind warm worse wife wound worth

w before h.

when wharf while whip where whence

w silent before r.

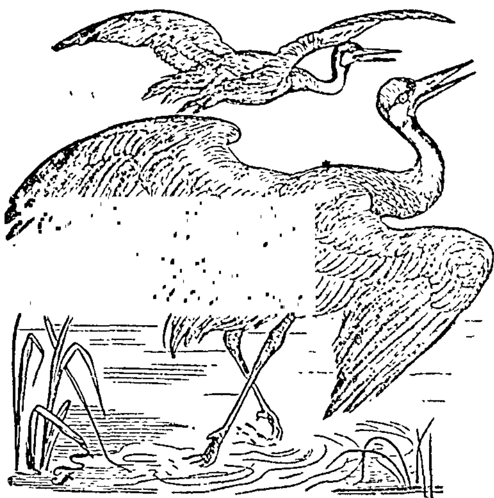
writ wring wretch wrap wright wreath

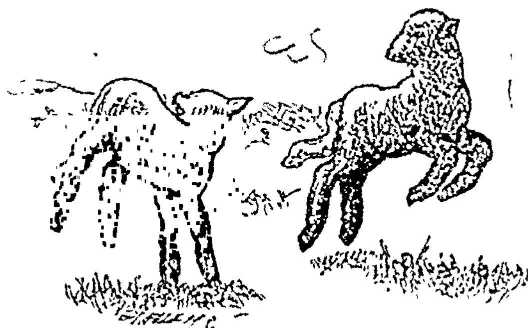
Y.

yet yea yes yearn yeast yacht

Z.

zeal zest zinc zone craze haze

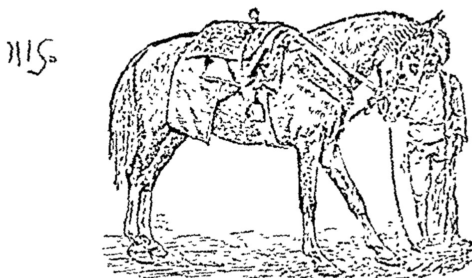




CHAPTER IV.

READING LESSONS WITH SEVERAL WORDS IN WHICH SOME LETTER OR LETTERS ARE SILENT.

Men and beasts have limbs. A man has two arms and two hands, two legs and two feet. A lamb has four legs and four feet. A dog has four paws. The horse has hoofs. He stands on a bridge. A man holds the reins of the horse.



There is a gnat on your cheek. It may sting you. Deign to hear what the poor man says. Do not feign to be deaf. Tears are the signs of grief.

One night, when the wind was high, a small bird flew into my room, from a tree that was nigh. The rough wind had thrown down its nest, from the bough on which it had been built; and the poor bird was hurt. I caught it, and fed it. I kept it till it could fly with ease.

Knock at the door. It is a hard knot. Cut it with your knife. I knew he was a knave. We should shun him. Do you know why that man is on his knees? He kneels down to pray to God.

There is no storm now. It is calm. Let us go to the palm-tree grove, and we will talk as we walk. Fetch that stalk of corn. See how the young folks play with the calf. It is half a year old.

Do not wring my hand so hard. You will hurt my wrist. When you write, mind how you spell your words. Look at that bird. Shall I catch it? No. It sits on its eggs to hatch them. I should do wrong to catch it.

A girl of five years of age got a pice to buy something to eat. She bought some bread; but when she came home, she saw at the door a poor lad, who said he had not eat-en a-ny food for two days. The kind girl gave him the bread she had bought.

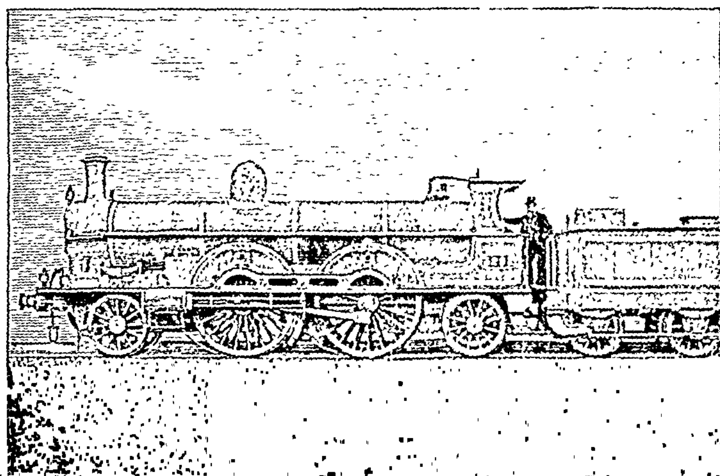
Though she did not eat the bread, she was glad that she had it to help the poor lad; and she was now more glad than if she had ea-ten it. Like the good girl, we ought to be kind to those who are in want.

FIGURES.

1	2	3	4	5	6	7	8
ONE	TWO	THREE	FOUR	FIVE	SIX	SEVEN	EIGHT

9	10	0
NINE	TEN	CYPHER

Obs.—Pupils should understand how with the cypher and the nine digits all numbers can be expressed. Pupils should first learn to write all numbers from one to one hundred; and then the principles of notation and numeration should be explained gradually.



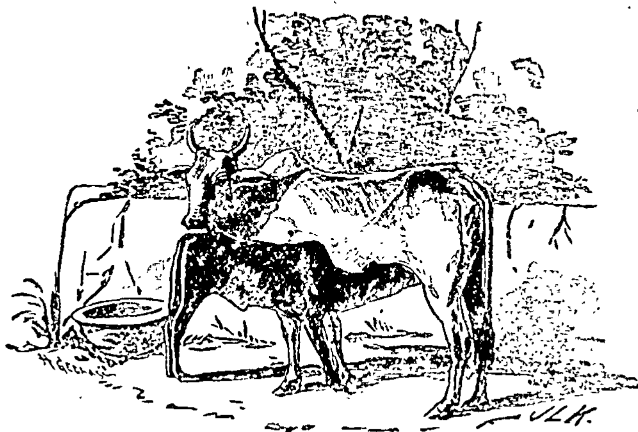
CHAPTER V.

Lesson 1.—STOPS.

Com-ma	,	Full stop	.
Se-mi-co-lon	;	Note of In-ter-ro-ga-tion	?
Co-lon	:	Note of Ad-mi-ra-tion	!

When you read your book, you will see some marks, call-ed stops. When you come to those marks, you should stop. When you see a com-ma, stop for a short time, or as long as will take you to count one. When you come to a se-mi-co-lon, stop as long as will take you to count one, two. At a co-lon, stop till you have counted one, two, three; and at a full stop, drop your voice quite, and stop till you have counted one, two, three, four.

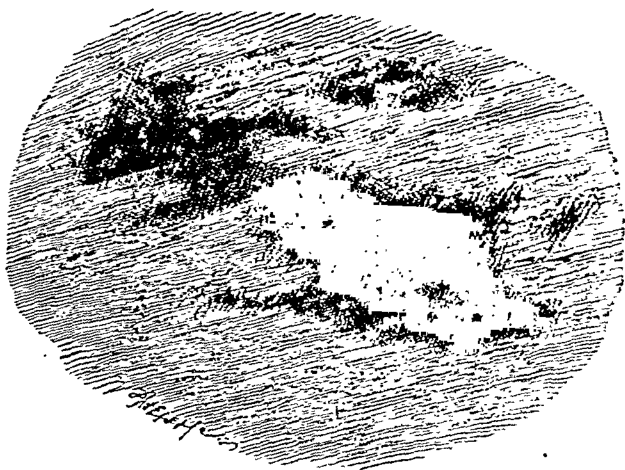
Obs.—In all subsequent reading lessons, care should be taken that children make the proper stops. The teacher should explain the Notes of Admiration and Interrogation.



Lesson 2.—THE COW.

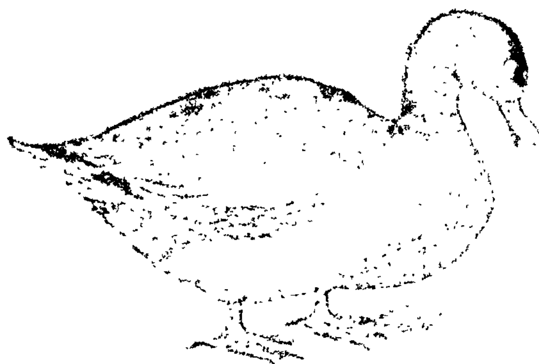
Here is a nice cow. She is a good beast. She

does no harm. She likes to lie still on the green. She gives us milk. The milk is sweet and makes us strong. Some sweet-meats are made from milk. We should feed her with care. She grazes in the field. She does not eat flesh or fish, like dogs. She eats grass, leaves of trees, small plants and grain. She has four legs and hoofs, like goats, horses, and asses. Her horns are bent. She is tame. I can go to her. She will not hurt me.



LESSON 3.—NIGHT.

The night is dark. I do not see the moon, but the stars shine. I like to see the stars, and try to count them. No one can count the stars. They guide us at night.



LESSON 4. THE DUCK.

This duck has just come out of the pond. Her neck is not all white. She can use her long bill to get hold of food. Her feet have webs, so she can swim well. Can she wade in the mud? Yes. She will come to me, if I call. She lays eggs.

LESSON 5.—DO NOT TELL A LIE.

To lie is a sin. It is a great fault; men do not trust those who lie. All good men hate him who lies. Our friends will not love us if we lie; and we shall be put to shame.

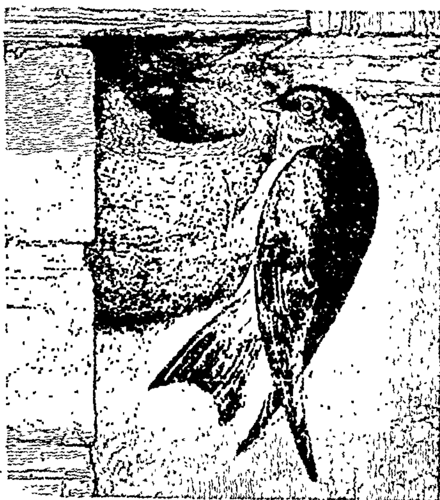
Obs.—All moral lessons should be made impressive. Children should know that lying, stealing, etc., are against the laws of God; that were every one to lie, no truth could be known, and consequently no business could be properly done, and no one could enjoy happiness; that should every one steal, there would be no property, etc., that lying, stealing, and the like, are hateful both to God and man.

LESSON 6.—DAWN.

It is the time of dawn. The air is cool. This is the best time to walk. If we walk at the time of dawn, we shall have health. We must get out of bed, for the sun will soon rise. Do not walk on the grass, for it is wet with dew. How bright are the drops of dew on the blades of grass! How the birds sing on the tree! What fine hues are seen in the east! The sun will rise there.

LESSON 7.—A THIEF.

I knew a boy who once stole a book. It was soon found out. All boys said he was a thief, and he was put to great shame. He is now sorry that he was such a bad boy as to steal a book. Now he does not take what is not his own; for he has learnt that to do so is to steal, which is a sin, and a crime too. Men hate those who steal; and no one likes to play with them, or speak to them.



LESSON 8.—THE ASS.

The ass has hoofs, and long ears. He makes a great noise when he brays. He is meek and hurts no-one.



The ass is not so big as a horse, and can-not run so fast; but he works hard. Some-times he takes boys on his back; and some of them whip the poor ass, and prick his sides, to make him go fast. But we should not do so; for the ass feels pain as well as we do.

He brings things on his back, from place to place. He has no stall to go in-to. He lies out in the fields, and gets coarse grass for food.

I will pat him, and give him some food. I will not let bad men beat him, and use him ill. I will be kind to him, and he will be fond of me.

LESSON 9.—RAIN.

There has been no rain for some time. The ground is dry, and hard. Grass and plants are burnt, by the heat of the sun; and if it do not rain soon, they will die.

The sun does not shine now. But it is hot. There is no wind at all. The sky looks black. How dark it is! What a bright light shone through the sky! It is gone. It does not last long. What a noise there is! It rains. Oh, what large drops! Rain comes from the clouds.

Lesson 10.—A WALK AT THE TIME OF DAWN.

At *dawn* of *day*, we went out of the *town*, to take a *walk*, on a *piece* of high *ground*, and saw the *sun* rise. Its *rays* soon grew so bright, that we could not look at it. We then saw the *face* of the *land*. The *tops* of *trees* shone as if they had been of *gold*. The *houses* were gay with the *light*; and all *things*, that met our *eyes*, wore a bright *look*. A *lark* rose from her *bed* of *grass*, sang a sweet *song*, and rose so high in the *air*, that, at last, we could not see where she was. We saw a *hare* start near us, and run fast in-to the *wood*. The *crows* left their *roosts*, and flew to *fields* through which the *plough* had just gone, to feed on *worms* and *grubs*, of which they are fond. A *girl* came to milk *cows*, and that made us stay half an *hour* near her.

Obs.—After pupils have learnt the meanings of the words in italics, it should be explained that they are names of things, and are therefore called *nouns*.

Lesson 11.

I see *you* are good, and *he* is bad; *you* do *your* work, but *he* does not. *He* tears the books *which we* give *him*. *They* are torn, and *he* can-not read from *them*.

Whose pen is *this?* *It* is Ann's. *She* writes well, and does *what her* friends tell *her*. *She* told *me* of some poor men, *whom she* had seen on the road. *They* had no clothes on *their* back. Will you give *them* some? *I* will give *them* the pice *that I* have in *my* box.

How did *you* get *our* slate? *We* did not give *it* to *you*. Why do *you* take *it* from *us?* *We* are as fond of *our* things as *you* are of *yours*. Do *you* like to lose *your* slate? Then why should *we?*

Obs.—After children have explained the words in italics, they should be made to see that the words are not the *names* of things or persons, but *stand for nouns*, and are thus *pronouns*, that is, *for nouns*.

Lesson 12.

Will you go with *us* to the corn-*field?* There are no good *houses*, or *trees* with large broad *leaves*. *You* will find *blades* of *grass*, and *ears* of *corn*. Some *kinds* of *grass* and *rushes* grow in the *midst* of *corn*. *You* will see a *ditch* all round: *ditches* are dug round *fields*, that *kine, bulls, goats, sheep, oxen*, and *ass-es* may not go in-to *them* to graze. *Moles, rats*, and *mice* make *holes* in the *ground*, to live in. *They* have no *boxes*. *They* hide *their stores* in the *ground*. When the *corn* is ripe, *men* cut down the *stalks*, and bind *them* in-to *sheaves*. Then *they* thrash out the *corn* from the *stalks*, and keep *it* in barns.

Obs.—In explaining the words in italics, the singular and plural numbers should be distinguished. It should then be taught that the singular denotes one thing, and the plural more than one; that nouns generally form their plural with *s* at the end: that those ending in *s, ss, ch, sh, x*, and *o*, take *es*; that those in *f* or *fe*, change *f* or *fe* into *ves*; that some, like *mice, men, kine*, are irregular; and that in pronouns, the plural is not formed by changing the termination of the singular, but by different words.

LESSON 13.—A GOOD BOY.

Do you know *Raman?* All *men* love and praise *him.* *He* learns *his tasks* well, and does not play when *he* should mind *his book.* But when *he* has *leave* to play, *he* plays with good *boys* and *girls,* and chooses such *games* as are free from *blame.* *He* does not hurt boys or girls. *He* does not beat *cows* and *dogs.* *He* is kind to *his mare.* *He* feeds, with *his own hands,* *his drakes, ducks, cocks, hens,* and *geese.* *He* loves *his* friends. *He* helps all poor *men.* *He* does not laugh at a lame or blind *man,* but gives *him pice* and *clothes.*

Obs.—After children have learnt the meanings of the words in italics, it should be explained to them, that all *male* animals are said to be of the *masculine,* and all *female,* of the *feminine* gender; that *inanimate* things are of the *neuter,* that is, *neither* gender; and that pronouns are of the same gender with the nouns for which they stand.

LESSON 14.

The sun is just set. The air is *cool.* There is no cloud in the *blue* sky. The cows lie down on the *soft* grass, and chew the cud. A *sweet* smell comes from a bed of roses. Flocks of *gay* birds fly in-to the *thick* wood. The corn looks *fresh* and *green.* A *brisk* bee hums near me. Her day's *hard* toil is done. She goes back to her *neat* hive. It grows *dark.* The *bright* moon and stars will soon rise, and give us light.

Let us go to Beni's house. He is a *good* child. He is *mild,* and kind to all. One *cold* night he saw a

poor sick man in the road. The man was *weak.* Velu brought him home, and gave him *warm* clothes.

One day he saw a boy throw a *small* bird in-to a *deep* tank. He told the boy it was not a *good* act. He took out the bird, and gave it *ripe* fruits and corn to eat. When its wings were *dry* he let it fly.

Obs.—After children have explained the words in italics, they should be asked if the words make complete sense by themselves: then the boys should be led on to join them with nouns, to make complete sense. It should now be told that they express the quality of things, and that they are *adjectives.*

Lesson 15.

The dog *barks.* The pig *squeaks.* The hog *grunts.* The cat *mews.* The bee *hums.* The rook *caws.* The cow *lows.* The sheep *bleats.* Man *speaks.*

Feed the geese. *Eat* the grapes. *Spread* the mat on the floor. *Sit* down. *Give* me your stick. His hand *is bound* up with a piece of cloth. He *was thrown* down by a bull, and his arm *was* hurt.

Come to me and *read.* Here *is* a new book. *Take* care not to *spoil* it. You *should speak* plain. Good boys *take* pains, and *try to read* well. When you *read, mind* your stops. You *should stand* still, and *wait* till it *is* your turn. Your book *is torn.* The ink *is spilt.* *Mend* your pen. *Do* not *write* so fast. *Hold* your pen well. *Show* me what you *have done.*

Obs.—After children have explained the words in italics, they should be made to see in what respect they differ from the other classes of words, and how they are connected with nouns. It should then be shown, that all of them *affirm something of nouns or pronouns,* and are called *verbs.*



LESSON 16.—THE CAT.

1. Here comes Puss. She purrs, and frisks, and wags her tail. There runs a Mouse! Poor Mouse, make haste to your hole, or Puss will catch you, and eat you up.

2. Puss is small, but of great use. She kills rats and mice, which do a great deal of harm to the corn in barns; and which eat meat, bread, and fruit, where they can find á-ny.

3. Cats hunt by the eyes and smell: they lie in wait, and spring on their prey; if it be a rat or mouse, they grasp it with their teeth.

4. Cats run up walls and trees vé-ry fast, and can leap a great way: and should they fall from a great height, they are sure to fall on their feet.



CHAPTER VI.

Obs.—The following reading lessons should first be carefully read with an attention to stops, and to the full, clear, and distinct articulation of every word and syllable. No sing-song or unnatural tone should be tolerated. They are next to be explained almost wholly by the *pupils*, the teacher only telling them the meanings of the words they do not know, and directing them how to connect one word with another. The practice of explaining a whole passage at once, or telling the meaning of a whole line or sentence without any regard to the individual words, and making children learn the meaning by rote, is very injurious. Some of the leading words in a sentence should be explained, and the ideas conveyed by them should be clearly pictured out in words, by prints, or by similar objects or ideas, and illustrated by familiar examples. After the leading words have been learnt, pupils should be led on to connect them by means of verbs, adjectives, and other connectives. Every modification in the words themselves, especially those regarding numbers, genders, tenses, etc., should be attended to. When the pupils have learnt the meanings of the words in a lesson, the sense of whole lines, and lastly of whole sentences, should be explained, and the children made to express the same *idiomatically* in the vernacular. Boys often explain in unintelligible vernacular from the habit of closely adhering to the English construction of the sentences, even when they are required to give the purport of a passage, and not the meanings of individual words.

Pupils should next find out the nouns, adjectives, pronouns, and verbs, one after another, in every sentence. The nouns qualified by the adjectives, the nominatives of the verbs, the numbers and genders of nouns, should be noticed.

After the whole passage has been explained, let pupils read it with *intelligence*, and with due regard to emphasis, etc. ; and let the teacher by apt questions, and judicious *leading on, elicit from them* the moral or instruction it contains.

Writing out from dictation should now be practised oftener. There is no better method of teaching children to spell correctly.

বর্ণপরিচয়

প্রথম ভাগ।

অসংযুক্ত বর্ণ।

ঈশ্বরচন্দ্র বিদ্যাসাগর প্রণীত।

নূতন বন্দোবস্তের একনবতিতম সংস্করণ।

প্রকাশক—শ্রীসিদ্ধেশ্বর পান, সিদ্ধেশ্বরপ্রেস্ ডিপজিটরি,
২০।১ নং কর্ণওয়ালিস ষ্ট্রীট্, কলিকাতা।

১৯১৮।

কাগজের মূল্য বৃদ্ধি জন্য ⁄০ স্থলে ⁄১০ পয়সা।

বিদ্যাসাগর প্রণীত সকল পুস্তকে রিসিভারের
সহি ছাপ থাকিবে।



সেণ্ট্রালটেক্সট্‌বুক্ কমিটীর অনুমোদিত।
আদ্যোপান্ত সংশোধনপূর্ব্বক কাপিরাইট্ রেজিষ্ট্রী হইয়াছে।



বিজ্ঞাপন

বর্ণপরিচয়ের প্রথম ভাগ প্রচারিত হইল। বহুকাল অবধি বর্ণমালা, ষোল স্বর ও চৌত্রিশ ব্যঞ্জন, এই পঞ্চাশ অক্ষরে পরিগণিত ছিল। কিন্তু, বাঙ্গালা ভাষায়, দীর্ঘ ঋকার ও দীর্ঘ ৯কারের প্রয়োগ নাই; এই নিমিত্ত, ঐ দুই বর্ণ পরিত্যক্ত হইয়াছে। আর, সবিশেষ অনুধাবন করিয়া দেখিলে, অনুস্বার ও বিসর্গ স্বরবর্ণ বলিয়া পরিগণিত হইতে পারে না। এজন্য, ঐ দুই বর্ণ ব্যঞ্জনবর্ণের মধ্যে পঠিত হইয়াছে। আর, চন্দ্রবিন্দু, ব্যঞ্জনবর্ণস্থলে, এক স্বতন্ত্র বর্ণ বলিয়া পরিগণিত হইয়াছে। ড, ঢ, য, এই তিন ব্যঞ্জনবর্ণ, পদের মধ্যে অথবা পদের অন্তে থাকিলে, ড়, ঢ়, য়, হয়; ইহারা অভিন্ন বর্ণ বলিয়া পরিগৃহীত হইয়া থাকে। কিন্তু যখন আকার ও উচ্চারণ উভয়থাই পরস্পর ভেদ আছে, তখন উহারা স্বতন্ত্র বর্ণ বলিয়া উল্লিখিত হওয়া উচিত; এই নিমিত্ত, উহারাও স্বতন্ত্র ব্যঞ্জনবর্ণ বলিয়া নির্দ্দিষ্ট হইয়াছে। ক ও ষ মিলিয়া ক্ষ হয়, সুতরাং উহা সংযুক্তবর্ণ; এজন্য অসংযুক্ত ব্যঞ্জনবর্ণের গণনাস্থলে পরিত্যক্ত হইয়াছে।

কলিকাতা। সংস্কৃত কালেজ।
বৈশাখ, সংবৎ ১৯১২। } শ্রীঈশ্বরচন্দ্র শর্ম্মা।

ষষ্টিতম সংস্করণের বিজ্ঞাপন।

আবশ্যক বোধ হওয়াতে এই সংস্করণে, কোনও কোনও অংশ পরিবর্ত্তিত হইয়াছে; সুতরাং, সেই সেই অংশে, পূর্ব্বতন সংস্করণের সহিত, অনেক বৈলক্ষণ্য লক্ষিত হইবে।

প্রায় সর্ব্বত্র দৃষ্ট হইয়া থাকে, বালকেরা অ, আ, এই দুই বর্ণকে স্বরের অ, স্বরের আ, বলিয়া থাকে। যাহাতে তাহারা সেরূপ না বলিয়া, কেবল অ, আ, এইরূপ বলে, তদ্রূপ উপদেশ দেওয়া আবশ্যক।

যে সকল শব্দের অন্ত্য বর্ণে আ, ই, ঈ, উ, ঊ, ঋ, এই সকল স্বরবর্ণের যোগ নাই, উহাদের অধিকাংশ হলন্ত, কতকগুলি অকারান্ত উচ্চারিত হইয়া থাকে। যথা, হলন্ত—খল, গজ, ঘট, জল, পথ, রস, বন ইত্যাদি; অকারান্ত—ছোট, বড়, ভাল, ঘৃত, তৃণ, মৃগ,

ইত্যাদি। কিন্তু, অনেক স্থানেই দেখিতে পাওয়া যায়, এই বৈলক্ষণ্যের অনুসরণ না করিয়া, তাদৃশ শব্দ মাত্রেই অকারান্ত উচ্চারিত হইয়া থাকে। বর্ণযোজনার উদাহরণস্থলে যে সকল শব্দ প্রযুক্ত হইয়াছে, তন্মধ্যে যে গুলি অকারান্ত উচ্চারিত হয়, উহাদের পার্শ্বদেশে * এইরূপ চিহ্ন যোজিত হইল। যে সকল শব্দের পার্শ্বদেশে তদ্রূপ চিহ্ন নাই, উহারা হলন্ত উচ্চারিত হইবে।

বাঙ্গালা ভাষায় তকারের ত, ৎ, এই দ্বিবিধ কলেবর প্রচলিত আছে। দ্বিতীয় কলেবরের নাম খণ্ড তকার। ঈষৎ, জগৎ, মহৎ প্রভৃতি সংস্কৃত শব্দ লিখিবার সময় খণ্ড তকার ব্যবহৃত হইয়া থাকে। খণ্ড তকারের স্বরূপ পরিজ্ঞানের নিমিত্ত, বর্ণপরিচয়ের পরীক্ষার শেষভাগে, তকারের দুই কলেবর প্রদর্শিত হইল।

কর্ম্মাটাড়,
১লা পৌষ, সংবৎ ১৯৩২। } শ্রীঈশ্বরচন্দ্র শর্ম্মা।

বর্ত্তমান সংস্করণের বিজ্ঞাপন।

পণ্ডিত নারায়ণচন্দ্র বিদ্যারত্ন, তদীয় পূজ্যপাদ পিতৃদেব ৺ঈশ্বরচন্দ্র বিদ্যাসাগর মহাশয়ের প্রণীত "বর্ণপরিচয় প্রথম ভাগের" যেখানে যেরূপ পরিবর্ত্তন, পরিবর্জ্জন ও পরিবর্দ্ধন আবশ্যক মনে করিয়াছিলেন, সেইরূপ করিয়া ১৩০৩ সালে, বর্ণপরিচয় প্রথম ভাগের এক নূতন সংস্করণ প্রকাশ করেন। তজ্জন্য উহাতে পূর্ব্বতন সংস্করণের সহিত অনেক স্থানে অনেক পাঠ-বৈষম্য লক্ষিত হয়।

উদাহরণ প্রদর্শনের অনুরোধে তিনি স্থানে স্থানে, অগত্যা দুই একটী অপ্রচলিত শব্দের প্রয়োগ করিয়াছেন, এবং বালকবালিকাগণের পাঠে মনঃসংযোগ ও আমোদ উৎপাদন আশয়ে প্রত্যেক বর্ণের নীচে এক একটী সুন্দর ছবি দিয়াছেন। তদ্দ্বারা, আশানুরূপ ফললাভ হইলে, তাঁহার শ্রম সফল জ্ঞান হইবে।

উপস্থিত সংস্করণ, সেই সংস্করণের অনুরূপ এবং উহাই এক্ষণে বর্ত্তমান রিসিভার শ্রীযুক্ত মিঃ পি, রায়চৌধুরী মহোদয়ের অনুমোদিত ও প্রচলিত।

বর্ণপরিচয়।

প্রথম ভাগ।

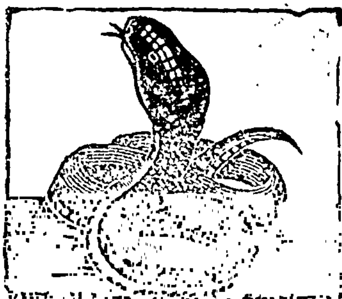
স্বরবর্ণ।

অ আ ই ঈ

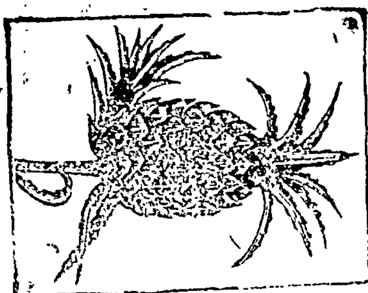
উ ঊ ঋ ৯

এ ঐ ও ঔ

অ অজগর।



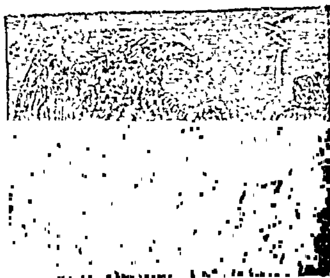
আ আনারস।



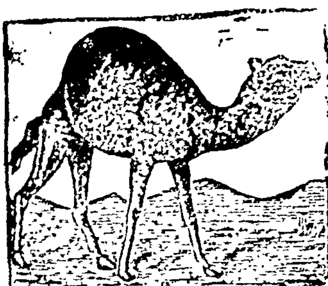
ই ইঁদুর।



ঈ ঈগল।



উ উট।



ঊ ঊর্দ্ধবাহু।



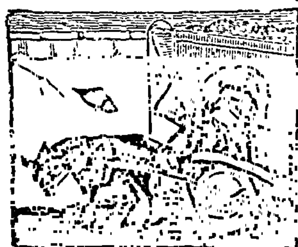
ঋ ঋষি।



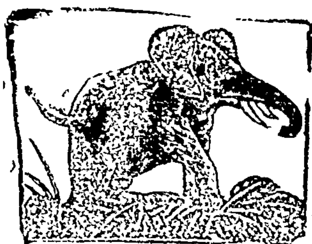
ঌ লিচু।



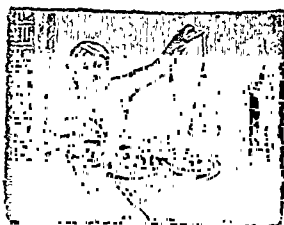
এ একা গাড়ী।



ঐ ঐরাবত।

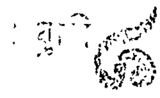


ও ওজন।



ঔ ঔষধ খাওয়ান।





বর্ণপরিচয়ের পরীক্ষা।

অ	এ	ঋ	ই
ও	ঌ	ঐ	উ
ঔ	ঈ	আ	ঊ

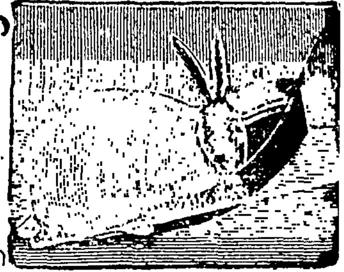
ব্যঞ্জন বর্ণ

ক	খ	গ	ঘ	ঙ
চ	ছ	জ	ঝ	ঞ
ট	ঠ	ড	ঢ	ণ
ত	থ	দ	ধ	ন
প	ফ	ব	ভ	ম
য	র	ল	ব	শ
ষ	স	হ	ড়	ঢ়
য়	ৎ	ং	ঃ	ঁ

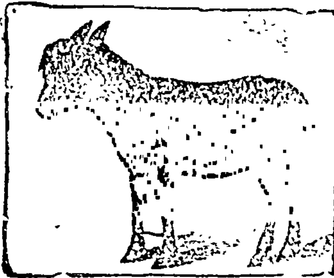
ক কুকুর।



খ খরগোস।



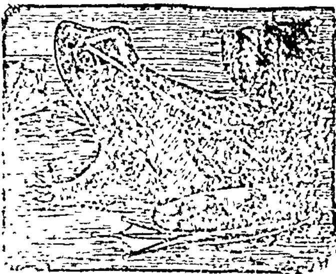
গ গাধা।



ঘ ঘোড়া।



ঙ বেঙ।



চ চিল।



ছ ছাগল।



জ জিরাফ।



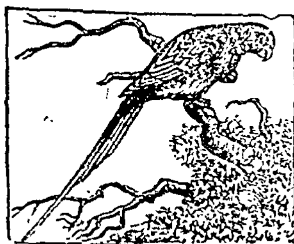
ঝ ঝাঁটা।



ঞ যাচিঞা।



ট টিয়াপাখী।



ঠ ঠাকুর-মা।



ড ডিম।

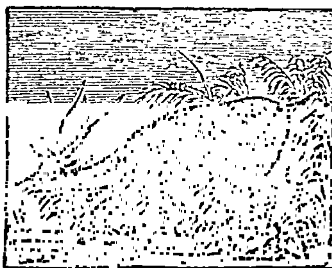
ঢ ঢুলি।

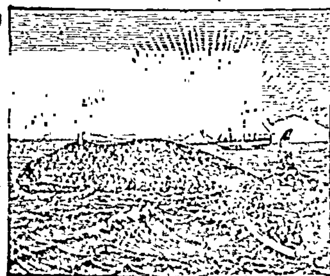




ণ হরিণ।

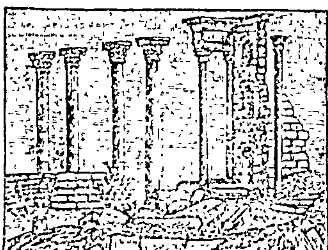
ত তিমি মাছ।

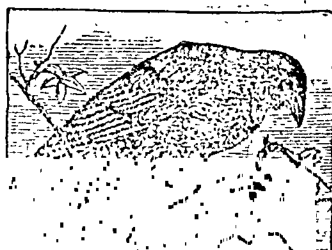




থ থাম।

দ দাঁড়কাক।





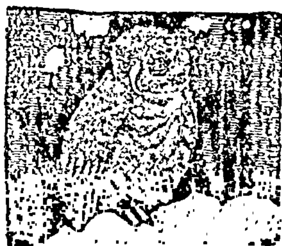
ধ ধুনুরী।



ন নেকড়ে বাঘ।



প পেঁচা।



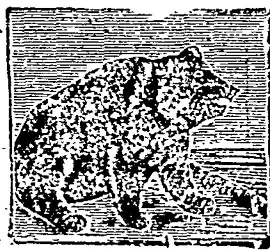
ফ ফড়িং।



ব বাঘ।



ভ ভালুক।



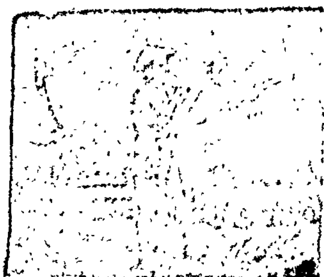
ম মহিষ। **য** যাঁতা।





র রাজহাঁস। **ল** লাঙ্গল।





ব বিড়াল। **শ** শৃগাল।

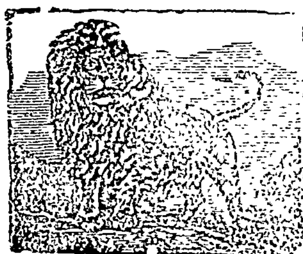




ষ ষাঁড়।



স সিংহ।



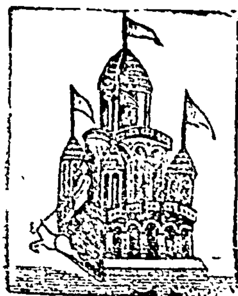
হ হনুমান।



ড় ঘোড়া ঘোড়া খেলা।



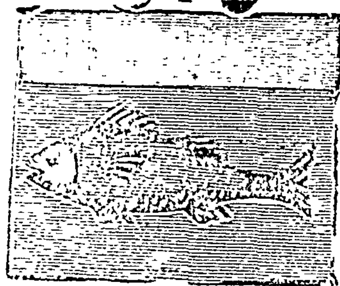
ঢ় আষাঢ়ে রথ।



ঢ জয়ঢাক।



ৎ মৎস্য।



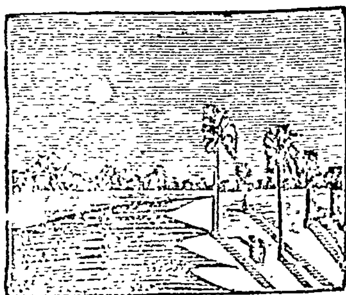
ং শিং।

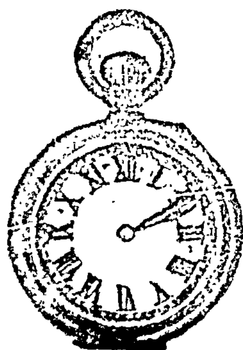


ঃ আঃ ছেড়ে দে।



ঁ চাঁদ।





বর্ণপরিচয়ের পরীক্ষা।

ব র ক ধ ঝ

জ য য় ষ ঘ

ম স খ থ ফ

চ ঠ ড ঢ় ট

গ ল শ হ ছ

ঞ দ প ণ ন

ঢ ড় ঙ ভ

ত ৎ ং ঃ ঁ

বর্ণযোজনা।

অজ*	ইট	উট	এক
আম	ঈশ*	ঋণ	ওল

কই	মই	লও
বই	লই	হও

কর	ঝড়	নয়	রস
খল	তল	পথ	শঠ
ছয়	দশ	ফল	সৎ

বর্ণযোজনা।

অচল	আলয়	ইতর	উভয়
অধম	আসন্ন	ঈষৎ	ঔষধ

লইব*	লউক	লইও
হইল*	হউন	হইও

কপট	জগৎ	ধবল	লবণ
গগন	তরল	নয়ন	বসন
ঘটক	দশম	রজক	শয়ন

আকারযোগ।

আ া

ক আ কা ত আ তা

উদাহরণ।

যাই	চাই	ঝাউ	খাও
ভাই	পাই	লাউ	দাও
কাক	ঘাস	ঝাল	বাঘ
গান	জাম	ধান	সাত
আতা	ইহা	উমা	একা
আদা	উহা	ঊষা	ওলা
সখা	ফণা	কথা	দয়া
জটা	লতা	সভা	মশা

আকারযোগ।

আ া

থ আ থা ম আ মা

উদাহরণ।

কাকা চারা দাদা মামা
খাতা জামা বাবা রাজা

ছাগল বালক পলাশ
পায়স সাহস আষাঢ়

মমতা অথবা বাগান রাখাল
গণনা ভরসা বাদাম বাতাস

অনাথা পতাকা যাতনা জানালা
উহারা সমাধা লালসা তামাসা

ইকারযোগ।

ই ি

ক ই কি   ব ই বি

উদাহরণ।

চিল	মণি	দধি	গিরি
ডিম	গতি	তরি	নিধি
তিন	যদি	রবি	লিখি

কিরণ	কঠিন	অশনি
দিবস	হরিণ	অবধি
নিকট	মলিন	আপনি

নিবিড়	অতিথি	নিয়তি
শিশির	অবিধি	মিনতি

ঈকারযোগ।

ঈ ী

ক ঈ কী ত ঈ তী

উদাহরণ।

কীট	তীর	নীল	বীজ
গীত	দীপ	পীত	শীত

ঘটী	নদী	শশী	মালী
ফণী	ধনী	করী	পাখী

জীবন	গভীর	ভগিনী
নীরস	শরীর	রজনী
শীতল	অলীক	কলসী

উকারযোগ।

উ

ক উ কু   স উ সু

উদাহরণ।

উঠ	দুধ	লঘু	বধূ
ধুলা	সুখ	কচু	মধু
মুখ	তুলা	সরু	আলু

কুশল	বকুল
যুবক	মাতুল
সুলভ	ঠাকুর

কুকুর   তুমুল   পুতুল   মুকুল

ঊকারযোগ।

ঊ ূ

ক ঊ কূ দ ঊ দূ

উদাহরণ।

কূপ	ভূল	ধূম	মূঢ়
চূণ	দূর	ধূপ	শূল

নূতন	অদূর
পূরণ	ময়ূর
ভূষণ	মসূর

ঋকারযোগ।

ঋ ৃ

ক ঋ কৃ   ত ঋ তৃ

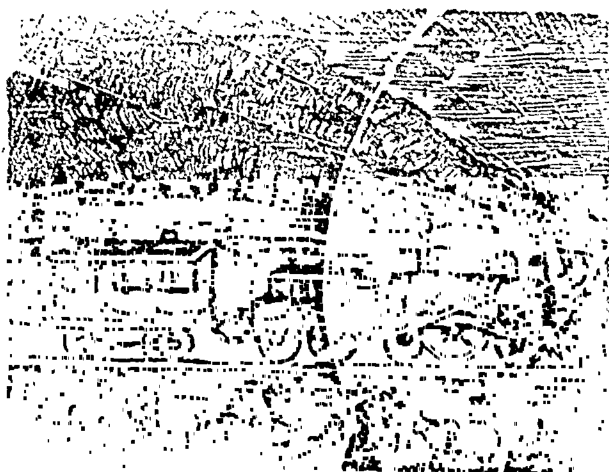
উদাহরণ।

কৃশ* ঘৃত* দৃঢ়* মৃগ*

গৃহ* তৃণ* ধৃত* বৃষ*

কৃপণ পৃথক্ বৃহৎ

সদৃশ* অমৃত* আবৃত*



রেলগাড়ী।

একারযোগ।

এ ে

ক এ কে দ এ দে

উদাহরণ।

কেশ মেঘ শেষ
তেজ লেপ হেম

কেবল ছেদন পেচক বেতন
চেতন দেবর লেখক সেবক

গণেশ অনেক কয়েক
আদেশ অভেদ আবেগ

ঐকারযোগ।

ঐ ৈ

ক ঐ কৈ   দ ঐ দৈ

উদাহরণ।

জৈন	দৈব*	শৈল*
তৈল	বৈধ*	হৈম*

তৈজস	বৈভব
ভৈরব	শৈশব

জনৈক*   অবৈধ*

ওকারযোগ।

ও ো

ক ও কো দ ও দো

উদাহরণ।

কোণ	দোষ	রোগ
গোপ	বোধ	লোভ
চোর	ভোগ	শোক

কোমল	ভোজন	রোপণ
গোপন	মোদক	লোচন

চকোর	কঠোর	আমোদ
অঘোর	অবোধ	আলোক

ঔকারযোগ।

ঔ ৌ

ক ঔ কৌ প ঔ পৌ

উদাহরণ।

গৌর ধৌত* মৌন*
তৌল পৌষ লৌহ*

কৌশল যৌবন

গৌরব সৌরভ
অগৌণ অশৌচ

দুই অক্ষরের মিশ্র উদাহরণ।

চারি	ঘৃণা	রিপু	কৃপা
পূজা	শোভা	নীতি	পীড়া
ধেনু	বায়ু	সুখী	রাশি
শিখা	সেবা	ধাতু	লেখা
বেণু	রীতি	বীণা	সীমা
লীলা	নৌকা	ভূমি	হানি

তিন অক্ষরের মিশ্র উদাহরণ।

বিকার	শৃগাল	দয়ালু
আকৃতি	নিষেধ	নিরীহ
মানুষ	বিচার	সোপান
কোকিল	কৌতুক	দুরাশা
বিড়াল	একাকী	পিপাসা
পৃথিবী	বালিকা	মেধাবী

চারি অক্ষরের মিশ্র উদাহরণ।

অধিকার	অনুপায়	আলোচনা
পরিহাস	পরিতোষ	অভিমান
পুরাতন	বিপরীত	নিবারণ
সমুদায়	অভিলাষ	পরিবার
অবিচার	অনুমান	কৌতূহল
পরিণাম	পরিশোধ	বিবেচনা

পাঁচ অক্ষরের মিশ্র উদাহরণ।

অনুধাবন	অবিবেচনা
অকুতোভয়	অনুশোচনা
পরিবেশন	অভিনিবেশ
অনুশীলন	নিরভিমান
অনুমোদন	পারলৌকিক
নিরপরাধ	পারিতোষিক

অনুস্বারযোগ।

ং

ক ং কং   ব ং বং

উদাহরণ।

অংশ*	হংস*	সিংহ*	এবং
বংশ*	মাংস*	হিংসা	বরং

দংশন	সংযোগ	আংশিক
সংযম	সংবাদ	বিংশতি
সংবৎ	সংসার	মীমাংসা
সংশয়	সংহার	সুতরাং

বিসর্গযোগ।

ঃ

ক ঃ কঃ   ন ঃ নঃ

উদাহরণ।

দুঃখ*   দুঃখিত   দুঃসহ*
দুঃখী   দুঃশীল   নিঃশেষ

নিঃসরণ   দুঃসাহস   মনঃপূত
নিঃসহায়   অতঃপর   শিরঃপীড়া
দুঃসময়   অধঃপাত   পুনঃপুনঃ

চন্দ্রবিন্দুযোগ।

ঁ

কা ঁ কাঁ চা ঁ চাঁ

উদাহরণ।

চাঁদ	ফাঁদ	কাঁটা	কাঁপা
দাঁত	বাঁশ	খাঁচা	ফাঁপা
পাঁচ	হাঁস	চাঁপা	যাঁতা

কুঁচ	ঢেঁকি	জোঁক
খাঁটি	পেঁচা	ঠোঁট

আঁচড়	তাঁহার	সিঁদূর
ইঁদুর	পাঁকাল	খেঁসারি
কাঁটাল	শাঁখারি	ভেঁতুল

বর্ণ বিশেষে উ ঊ ঋ যোগের বিশেষ।

গ উ গু

উদাহরণ।

গুড়	আগুন	গুণবান
গুণ	বেগুণ	গুণহীন

র উ রু

উদাহরণ।

রুচি	গরু	অরুণ	নিরুপায়
রুটি	তরু	করুণা	মরুভূমি

শ উ শু

উদাহরণ।

শুক	পশু	অশুভ
শুচি	শিশু	কিংশুক

হ উ হু

উদাহরণ।

বহু	বাহু	রাহু	আহুতি

র উ রূ

উদাহরণ।

রূঢ়	আরূঢ়*	অপরূপ
রূপ	স্বরূপ	নিরূপণ

হ ঋ হৃ

উদাহরণ।

হৃত*	সুহৃৎ
হৃদয়	অপহৃত*

১ পাঠ।

বড় গাছ।
ভাল জল।
লাল ফুল।
ছোট পাতা।

২ পাঠ।

পথ ছাড়।
জল খাও।
হাত ধর।
বাড়ী যাও।

---

৩ পাঠ।

কথা কয়।
জল পড়ে।
মেঘ ডাকে।
হাত নাড়ে।
খেলা করে।

৪ পাঠ।

কি পড়।
কোথা যাও।
ধীরে চল।
কাছে এস।
বই দেখ।

---

৫ পাঠ।

নূতন ঘটী।
পুরাণ বাটী।
কাল পাথর।
সাদা কাপড়।
শীতল জল।

৬ পাঠ।

বাহিরে যাও।
ভিতরে এস।
কপাট খোল।
কাগজ রাখ।
কলম দাও।

৭ পাঠ।

আমি যাইব।
সে আসিবে।
তোমরা যাও।
তিনি গিয়াছেন।
আমরা যাইতেছি।
তাহারা আসিতেছে।

৮ পাঠ।

কাক ডাকিতেছে।
গরু চরিতেছে।
পাখী উড়িতেছে।
জল পড়িতেছে।
পাতা নড়িতেছে।
ফল ঝুলিতেছে।

৯ পাঠ।

আমি মুখ ধুইয়াছি।
রাখাল কাপড় পরিতেছে।
ভুবন কাপড় পরিয়াছে।
গোপালের পড়িবার বই নাই।
মাধব কখন পড়িতে গিয়াছে।
যাদব এখনও শুইয়া আছে।
রাখাল সারা দিন খেলা করে।

---

১০ পাঠ।

রাম, তুমি হাসিতেছ কেন।
নবীন কেন বসিয়া আছে।
আমি আজ পড়িতে যাইব না।
তিনি এখানে কখন আসিবেন।
আমরা কাল সকালে যাইব।
তুমি একলা কোথায় যাইতেছ।
তোমরা এখানে কি করিতেছ।

১১ পাঠ।

তুমি কখন পড়িতে যাইবে।
যদু কাল সকালে আসিবে।
তোমার দেরি হইল কেন।
আমি আজ বিকালে যাইব।
কাল আমরা পড়িতে যাই নাই
আমি তোমাদের বাড়ী যাইব।
তুমি আমাদের বাড়ী আসিবে।

১২ পাঠ।

কখনও মিছা কথা কহিও না।
কাহারও সহিত ঝগড়া করিও না।
কাহাকেও গালি দিও না।
ঘরে গিয়া উৎপাত করিও না।
রোদের সময় দৌড়াদৌড়ি করিও না।
পড়িবার সময় গোল করিও না।
সারা দিন খেলা করিও না।

১৩ পাঠ।

তারক ভাল পড়িতে পারে।
ঈশান কিছুই পড়িতে পারে না।
কৈলাস কাল পড়া বলিতে পারে নাই।
আজ অসুখ হইয়াছে, পড়িতে যাইব না।
কাল জল হইয়াছিল, পথে কাদা হইয়াছে।
তুমি দৌড়িয়া যাও কেন, পড়িয়া যাইবে।
উমেশ ছুরিতে হাত কাটিয়া ফেলিয়াছে।

১৪ পাঠ।

আর রাতি নাই। ভোর হইয়াছে। আর শুইয়া থাকিব না। উঠিয়া মুখ ধুই। মুখ ধুইয়া কাপড় পরি। কাপড় পরিয়া পড়িতে বসি। ভাল করিয়া না পড়িলে পড়া বলিতে পারিব না। পড়া বলিতে না পারিলে, গুরু মহাশয় রাগ করিবেন; নূতন পড়া দিবেন না।

১৫ পাঠ।

বেলা হইল। পড়িতে চল। আমার কাপড় পরা হইয়াছে। তুমি কাপড় পর। আমার বই লইয়াছি। তোমার বই কোথায়। এস যাই, আর দেরি করিব না। কাল আমরা সকলের শেষে গিয়াছিলাম; সব পড়া শুনিতে পাই নাই।

১৬ পাঠ।

দেখ রাম, কাল তুমি, পড়িবার সময় বড় গোল করিয়াছিলে। পড়িবার সময় গোল করিলে, ভাল পড়া হয় না; কেহ শুনিতে পায় না। তোমাকে বারণ করিতেছি, আর কখনও পড়িবার সময় গোল করিও না।

১৭ পাঠ।

নবীন, কাল তুমি বাড়ী যাইবার সময়, পথে ভুবনকে গালি দিয়াছিলে। তুমি ছেলে মানুষ, জান না, কাহাকেও গালি দেওয়া ভাল নয়। আর যদি তুমি কাহাকেও গালি দাও, আমি সকলকে বলিয়া দিব, কেহ তোমার সহিত কথা কহিবে না

১৮ পাঠ।

গিরিশ, কাল তুমি পড়িতে এস নাই কেন। শুনিলাম, কোনও কাজ ছিল না, মিছামিছি কামাই করিয়াছ; সারা দিন খেলা করিয়াছ, রোদে দৌড়াদৌড়ি করিয়াছ। বাড়ীতে অনেক উৎপাত করিয়াছ। আজ তোমাকে কিছু বলিলাম না। দেখিও, আর যেন কখনও এরূপ না হয়।

১৯ পাঠ।

গোপাল বড় সুবোধ। তার বাপ মা যখন যা বলেন, সে তাই করে। যা পায় তাই খায়, যা পায় তাই পরে; ভাল খাব ভাল পরিব বলিয়া উৎপাত করে না। গোপাল আপনার ছোট ভাই ভগিনী গুলিকে বড় ভাল বাসে। সে কখনও তাদের সহিত ঝগড়া করে না,

তাদের গায় হাত তুলে না। এ কারণে তার পিতা মাতা তাকে অতিশয় ভাল বাসেন।

গোপাল যখন পড়িতে যায়, পথে খেলা করে না; সকলের আগে পাঠশালায় যায়। পাঠশালায় গিয়া, আপনার জায়গায় বসে; আপনার জায়গায় বসিয়া বই খুলিয়া পড়িতে থাকে; যখন গুরু মহাশয় নূতন পড়া দেন, মন দিয়া শুনে।

খেলিবার ছুটী হইলে, যখন সকল বালক খেলিতে থাকে, গোপালও খেলা করে। আর আর বালকেরা, খেলিবার সময়, ঝগড়া করে, মারামারি করে। গোপাল তেমন নয়। সে এক দিনও, কাহারও সহিত ঝগড়া বা মারামারি করে না।

পাঠশালার ছুটী হইলে বাড়ী গিয়া গোপাল পড়িবার বইখানি আগে ভাল জায়গায় রাখিয়া দেয়; পরে কাপড় ছাড়িয়া হাত পা মুখ ধোয়। গোপালের মা যা কিছু খাবার দেন, গোপাল তাই খায়; খাইয়া, আপনার ছোট ভাই ভগিনীগুলি লইয়া, খানিক খেলা করে।

গোপাল কখনও লেখা পড়ায় অবহেলা করে না। সে পাঠশালায় যাহা পড়িয়া আইসে, বাড়ীতে তাহা ভাল করিয়া পড়ে; পুরাণ পড়াগুলি দু' বেলা আগাগোড়া দেখে। পড়া বলিবার সময়, সে সকলের চেয়ে ভাল পড়িতে পারে।

গোপালকে যে দেখে, সেই ভাল বাসে। সকল বালকেরই গোপালের মত হওয়া উচিত।

২০ পাঠ।

গোপাল যেমন সুবোধ, রাখাল তেমন নয়। সে বাপ মার কথা শুনে না; যা খুসি তাই করে; সারা দিন উৎপাত করে; ছোট ভাই ভগিনী গুলির সহিত ঝগড়া ও মারামারি করে। এ কারণে, তার পিতা মাতা তাকে দেখিতে পারেন না।

রাখাল, পড়িতে যাইবার সময়, পথে খেলা করে; মিছামিছি দেরি করিয়া, সকলের শেষে পাঠশালায় যায়। আর আর বালকেরা পাঠশালায় গিয়া পড়িতে বসে। রাখালও দেখা-দেখি বই খুলিয়া বসে; বই খুলিয়া হাতে করিয়া থাকে, এক বারও পড়ে না।

লেখা পড়ায় রাখালের বড় অমনো-

পাঠশালার ছুটী হইলে বাড়ী গিয়া গোপাল পড়িবার বইখানি আগে ভাল জায়গায় রাখিয়া দেয়; পরে কাপড় ছাড়িয়া হাত পা মুখ ধোয়। গোপালের মা যা কিছু খাবার দেন, গোপাল তাই খায়; খাইয়া, আপনার ছোট ভাই ভগিনীগুলি লইয়া, খানিক খেলা করে।

গোপাল কখনও লেখা পড়ায় অবহেলা করে না। সে পাঠশালায় যাহা পড়িয়া আইসে, বাড়ীতে তাহা ভাল করিয়া পড়ে; পুরাণ পড়াগুলি দু' বেলা আগাগোড়া দেখে। পড়া বলিবার সময়, সে সকলের চেয়ে ভাল পড়িতে পারে।

গোপালকে যে দেখে, সেই ভাল বাসে। সকল বালকেরই গোপালের মত হওয়া উচিত।

যোগ। সে এক দিনও মন দিয়া পড়ে না; এবং এক দিনও ভাল পড়া বলিতে পারে না। গুরু মহাশয় যখন নূতন পড়া দেন, সে তাহাতে মন দেয় না, কেবল এদিকে ওদিকে চাহিয়া থাকে।

খেলিবার ছুটী হইলে, রাখাল বড় খুসী। খেলিতে পাইলে সে আর কিছুই চায় না। খেলিবার সময়, সে সকলের সহিত ঝগড়া ও মারামারি করে; এ কারণে, গুরু মহাশয় তাহাকে সতত গালাগালি দেন।

ছুটী হইলে, বাড়ীতে গিয়া, রাখাল পড়িবার বই কোথায় ফেলে, কিছুই ঠিকানা থাকে না। কোনও দিন, পাঠশালায় ফেলিয়া আইসে; কোনও দিন, পথে হারাইয়া আইসে; রাখালের পিতা এক মাসের ভিতর চারিবার বই

কিনিয়া দিয়াছেন। তিনি বলিয়াছেন, এবার বই হারাইলে, আর কিনিয়া দিবেন না।

রাখালকে কেহ ভা[illegible]সে না। কোনও বালকেরই রাখালের মত হওয়া উচিত নয়। যে রাখালের মত হইবে, সে লেখা পড়া শিখিতে পারিবে না।

---

২১ পাঠ।

১	২	৩	৪	৫
এক	দুই	তিন	চারি	পাঁচ
৬	৭	৮	৯	১০
ছয়	সাত	আট	নয়	দশ

Calcutta:
PRINTED BY ABINASH CHANDRA MANDAL,
AT THE SIDDHESWAR MACHINE PRESS,
1, Shibnarayan Das's Lane.
1918.



श्रीः

दमयन्ती।

पहला परिच्छेद।

पहले विदर्भ नामका एक बहुत बड़ा राज्य था, जहाँ के राजा भीमसेन बड़े ही विद्वान, चतुर, दूरदर्शी और पुण्यात्मा थे। कूण्डिन नामक नगरमें इस राजाकी राजधानी थी। कुण्डिन बड़ा ही मनोहर और देखने-योग्य नगर था। राजधानी रहनेके कारण नगर सदा सजा-सजाया रहता था। नगरके ठीक बीचों-बीच ए

बड़ा राजमहल बना हुआ था; जो बाहरसे देखने परही बड़ा रमणीक और सुहावना मालूम होता था। यहाँ सवेरे-सन्ध्या सदर दरवाज़े पर बाजे बजा करता थे। इस राजमहल में बहुतसे मनुष्य रहते थे। नित्य साधु-संन्यासी और अतिथि भी आया-जाया करते थे।

राजा देखने में सुखी थे। धन, धान्य, सेना सब तरह से राजाका राज भरा मालूम होता था; परन्तु उनके हृदयमें इतने सुख रहनेपर भी सच्चा आनन्द नहीं था, क्योंकि राजाके कोई सन्तान न थी। यही चिन्ता राजाको सदा सताया करती थी। राजा भी सन्तानके लिये बहुतसे व्रत,उपवास आदि किया करते थे। बहुत दिनों बाद दमन नामक एक संन्यासी के आशीर्व्वाद से राजाके एक कन्या उत्पन्न हुई। दमन संन्यासी के वरसे यह कन्या हुई थी; इसलिये इसका नाम दमयन्ती ही रक्खा गया।

दमयन्तीके समान सुन्दरी उस समय कोई दूसरी कन्या न थी। उसे जो देखता था वही विस्मित हो जाता था। देवता कहते थे—'हमलोगोंकी देवपुरीमें ऐसी सुन्दरी एक भी कन्या नहीं है।" अपसरा,किन्नरी,यक्ष रक्ष सभी दमयन्ती के रूपकी प्रशंसा करते थे। ऐसी सुन्दरी कन्याको पाकर रानी फूली न समाती थीं। इस लिये उसके लालन-पालनका भार दूसरों-पर न सौंपकर उन्होंने अपने ही हाथोंमें रक्खा था। रानी के यत्न और लालन-पालनमें रहकर दमयन्ती शुक्लपक्षकी चन्द्रमाकी

भाँति दिनोंदिन बढ़ने लगी। ज्यों-ज्यों उसका शरीर बढ़ता गया, त्यों-त्यों उसकी सुन्दरता भी बढ़ती ही गई।

अब दमयन्तीका अपनी माताके साथ रहने अथवा खेलनेमें जी नहीं लगता था। अब वह अपने खेलके लिये सङ्गिनी खोजती थी; इस लिये राजा भीमसेनने चुनचुन कर उसीकी उम्रके समान उम्रवाली चार साथिनें बुला दीं। ये चारों राजपुरीमें रहकर दमयन्तीके साथ खेलकूदमें अपने दिन बिताती थीं। उनके कपड़े-लत्ते सब दमयन्तीके समान ही थे। भोजन इत्यादि सब राजकुमारी दमयन्तीकी तरह उन्हें मिलता था। वे सब भी दमयन्ती को अपने प्राणोंसे बढ़कर मानती थीं। दमयन्ती उनके इस प्रेमपर मुग्ध हो रही थी। उन्हें छोड़कर क्षणभर भी इधर-उधर रहनेको जी नहीं चाहता था।

राजा स्वयं ही अपनी कन्या को शिक्षा देते थे। बड़े यत्नसे पढ़ाते-लिखाते, धर्मशास्त्र समझाते और धर्मकी महिमा बताते थे। उन्होंने धर्मशास्त्रकी सब बातें उसे अच्छी तरह समझा दी थीं। पिताकी शिक्षा पाकर दमयन्ती रूपमें जैसे लक्ष्मीके समान थी, गुणमें भी वैसी ही सरस्वतीके समान हो गई।

रानी स्वयं अपनी कन्याका चरित्र सुधारतीं और उसे घरके काम-काज सिखाती थीं। गृहस्थीमें स्त्रियोंके लिये किन-किन गुणोंकी आवश्यकता है, किन-किन कामोंकी ज्ञान रखना उचित है, पतिसे स्त्रीका कैसा व्यवहार होना चाहिये, सास,

ससुर, ननद, भौजाई, जेठ, देवर इन सभोंसे कैसा बर्ताव करना चाहिये, भोजन किस तरह बनाना चाहिये, किन-किन नियमोंका पालन करना चाहिये—रानी सभी बातें बड़े प्रेम और आदरसे दमयन्तीको सिखाती थीं। उसका चरित सुधारनेके लिये अवसर पाते ही अच्छी-अच्छी आदर्श रमणियोंके जीवन चरित्र भी उसे सुनाती थीं।

सन्ध्याके समय रानी दमयन्तीको लेकर अन्तःपुरके बाग़में घूमतीं। उसे सीता, सावित्री, सती, चिन्ता, पार्वती आदि आदर्श रमणियोंके जीवन-चरित्र सुनाती थीं। दमयन्ती भी बड़े प्यारसे जी लगाकर ये चरित्र सुनती और अपने चरित्रको वैसाही बनानेका उद्योग करती थी।

दमयन्ती जब सुनती कि, सतीने राजकन्या होकर भी श्मशानवासी महादेवको वरण किया था, भिखारिणीके वेशमें ही उनकी सेवा-शुश्रूषाकी थी—पिताके मुँहसे उस भिखारी पतिकी निन्दा सुनकर ही अपने प्राणत्याग दिये थे—उस समय वह अपने मन ही मन विचारती थी कि पतिही परम देवता है, पति सभी अवस्थामें पूजनके योग्य है। सती स्त्री पतिकी निन्दा नहीं सुन सकती।

फिर दमयन्ती जब सुनती—राजकन्या सावित्रीने अपने सतीत्वके बलसे मृत पतिको जीवित कर दिया था; उस समय सतीत्वकी महिमा सुनकर उसका चित्त प्रसन्न हो जाता। सीताका हाल जब सुनती कि, राजकन्या होकर भी

सीताने रामचन्द्रके साथ चौदह वर्ष वनमें बिताये थे—लङ्काका राजा रावण उसे हरकर ले गया था—उसने असह्य कष्ट सहकर भी अपने सतीत्वकी रक्षा की थी—अग्नि-परीक्षाके समय आग भी उसे जला न सकी थी; तो वह सती-धर्मका गौरव विचारती और मनही मन अपने को भी वैसीही बनाने की प्रतिज्ञा करती थी। फिर जब सुनती कि राजरानी सीता स्वामीसे त्याग दी जानेपर भी सदा उनके ध्यान में ही मग्न रहती थी, तब उसे यह समझने में कुछ भी बाक़ी नहीं रह जाता था कि, स्वामी क्या वस्तु है। वह इन तपस्विनी पुण्यमयी स्त्रियोंका जीवन-चरित्र सुनकर ईश्वर से प्रार्थना करती—"प्रभो! इस दासीके हृदयमें बल दो, जिससे यह भी इन आदर्श स्त्रियोंके चरित्र का अनुकरण कर सके।"

सखियोंके साथ खेलकूद और माता-पिताकी शिक्षामें दमयन्तीका बालापन बीत गया। अब उसमें लड़कियोंकीसी वह चञ्चलता नहीं है। उस चञ्चलता की जगह पर धीरता और गम्भीरताने उसे औरभी सुन्दर बना दिया है। लज्जा मिली हुई सरलताने मणिकाञ्चन का भाव धारण किया है। अब उसे खेल-कूदका शौक़ नहीं है, अब वह माता-पिता की सेवा और संसारके काम-धन्धोंपर ध्यान देती है। दमयन्ती सभोंसे बड़ाही स्नेहमय व्यवहार करती है। अन्धे और भूखोंपर दया करती है। दुःखियोंका दुःख दूर करती है। अभी तक तो उसके रूपकी चर्चाही थी, पर

फैल रही थी, अब उसके गुणोंकी बातें भी चारों ओर प्रकाशित होने लगीं। सभी उसे रूपमें लक्ष्मी और गुणमें सरस्वती के समान जानने लगे।



दूसरा परिच्छेद।

जिस समय भीमसेन विदर्भ राज्यमें राज करते थे; उस समय निषध राज्यमें नल नामक एक युवक राज्य करते थे। युवक नल बड़ेही सुन्दर, सुशील और राजनीतिज्ञ थे। जिस तरह दमयन्तीके जोड़की कोई स्त्री उस समय न थी; उसी तरह नलके जोड़का कोई पुरुष भी उस समय न था। जो दमयन्तीको देखने बाद नलको देखते, वह यही कहते थे कि दमयन्तीके जोड़का यही एक वर है। फिर जो नलको देखकर दमयन्ती को देखते, वह यही कहते थे कि,—"विधाताने नलके लिये ही दमयन्ती को पृथिवीपर भेजा है।" सभोंके मनमें यही एक भाव आता। सभी कहते कि, नल दमयन्तीका मिलन होनेसे ही विधाताकी सौन्दर्य्य-सृष्टिका सम्मान बचेगा, नहीं तो डूब जायगा।

नलके साथी दमयन्ती के रूपकी वर्णना सदा नल को सुनाया करते थे। राजा नलकी सभामें जो कवि और ऋषि-मुनि आते वह भी दमयन्तीके असामान्य रूपगुणकी सदा आलोचना किया करते थे। राजा नल गम्भीरतासे सभोंकी

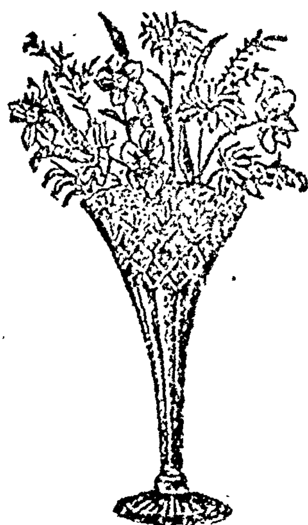
बातें सुनते और चुप रह जाते थे—अपनी कोईसी भी इच्छा प्रकट नहीं करते थे।

परन्तु बार बार दमयन्तीके रूपगुणकी इतनी प्रशंसा सुनकर नल राजाका भी चित्त विचलित हो गया। दमयन्तीको पानेकी इच्छा उनके हृदयमें जागरित हुई। इच्छा उत्पन्न होने पर भी नलने इस भेद को छिपाना चाहा। स्वाभाविक धीरता और गम्भीरताके पर्देमें यह भाव कुछ दिनों तक तो छिपा रह गया, परन्तु अधिक दिनों तक छिपा न रह सका। हृदयमें घुसी हुई प्रेमकी आग हृदयको धीरे-धीरे जलाने लगी। धीरे-धीरे उनका यह कष्ट बाहर प्रकट होने लगा। उनके चित्तमें शान्ति नहीं थी—दमयन्तीको चिन्ता सदा उन्हें सताया करती थी। अब राज-काज पर भी इतना ध्यान नहीं था, सदा अनमनेसे रहते थे, मानो एकमात्र दमयन्तीका ध्यान ही सदा उनके मस्तिस्क में चक्कर लगाया करता था। जब उनके साथियोंने इसका कारण पूछा तो नलने कहा—"इसमें कोई सन्देह नहीं कि, मैं दमयन्तीको प्यार करता हूँ; परन्तु उसके हृदयमें क्या भाव है—वह किसे प्यार करती है—यह कौन जानता है? विधाता को जो इच्छा होगी, वही होगा।"

दमयन्तीका मनोभाव जाननेके लिये राजा नल बहुतही व्याकुल हो उठे। बाग़में घूमते, सोते-बैठते, खाते-पीते, सभी स्थानों पर समय-समय उन्हें यही चिन्ता व्याकुल करने लगी।

दिन वह बाग़में घूम रहे थे। यकायक तालबके किनारे एक

राजहंस दिखाई दिया, जिसका रङ्ग सोनेके समान चमकता था। नलको देखते ही पकड़नेकी इच्छा हुई। थोड़े ही परिश्रमसे उसको पकड़ लिया, परन्तु उसी समय हंस मनुष्योंकी भाषामें बोला—"महाराज, मुझे छोड़ दीजिये। आपने जिस दमयन्ती की चिन्तामें अपने शरीरको बिगाड़ डाला है, जिसके मनका भाव जानने के लिये आप इतने व्याकुल हो रहे हैं, मैं उसका मनोभाव आपको बताऊँगा।" नलने हंसको छोड़ दिया। हंस उसी समय उड़कर विदर्भदेश की ओर चला गया।



तीसरा परिच्छेद ।



इधर दमयन्ती भी सखियोंके मुँहसे सदा राजा नलके रूप-गुणकी प्रशंसा सुना करती थी । माता-पिता भी, जब कभी दमयन्ती के विवाहकी चर्चा चलती तो, राजा नलका ही पहले नाम लेते थे । सभोंके मुँहसे नलकी बातें सुनते-सुनते दमयन्तीका चित्तभी नलपर अनुरक्त हुआ । परन्तु दमयन्तीने यह भाव ऐसा छिपाया कि, बहुत दिनों तक किसीको इस बातका पता न लगा । परन्तु इतना अवश्य हुआ कि, जब कभी राजा नलकी चर्चा चलती तो वह बड़े ध्यानसे सब बातें सुनती थी ।

एक दिन सन्ध्याको दमयन्ती अपनी सखियोंके साथ बाग़में फूल चुन रही थी, इसी समय वही राजहंस उड़ता हुआ वहाँ आ पहुँचा और तालाबके किनारे इधर-उधर घूमने लगा । दमयन्तीने ऐसा हंस कभी नहीं देखा था । उस हंस को देखतेही दमयन्ती उसे पकड़नेके लिये व्याकुल हो उठी । सखियाँ हंसको पकड़नेके लिये इधर-उधर दौड़ने लगीं । यह हाल देख हंस दमयन्तीकी ओर दौड़ आया और मनुष्योंकी भाषामें ला—"सुन्दरी ! तुमने नल राजाके रूप-गुण की बातें तो

बिना मातापिताकी अनुमतिके यह काम मैंने अच्छा नहीं किया। यदि वे सम्मत न हुए तो फिर क्या होगा? इसी चिन्ता में वह व्याकुल हो उठी। साथही साथ नलकी चिन्ता भी उसे सताने लगी। अब न उसकी आँखोंमें नींद है, न समय पर आहार है, न सखियोंके साथ खेलनाही है। केवल चुपचाप बैठकर कुछ सोचना और ठंडी साँसें भरना ही उसका काम रह गया। उसका यह हाल देख सखियाँ भी समझ गईं कि यह अनुरागके पूर्व्व लक्षण हैं; परन्तु वह किस पर अनुरक्त हुई है, यह कोई भी समझ न सकी।

सखियोंने दमयन्ती की अवस्था रानीसे कही। रानीने राजा भीमसेन को कह सुनाई। यह भी कह दिया कि, दमयन्ती किस पर मोहित हुई है यह अभी तक मालूम नहीं हुआ है।

राजा भीमसेनने मनही मन विचारा—"दमयन्तीके मनके भावका पता नहीं लगता—नहीं जानता वह किसपर अनुरक्त हुई है। इस अवस्थामें बिना विचारे किसी मनुष्य से उसका विवाह कर देनेपर पीछे वह दुःखी हो सकती है।" यह सोच उन्होंने स्वयम्बर की तय्यारी करनेकी आज्ञा दी। स्वयम्बरकी तय्यारियाँ होने लगीं। दमयन्ती यह सब देख कुछ शान्त हुई।

चौथा परिच्छेद।

दमयन्ती असामान्या सुन्दरी थी। उस समय स्वर्ग, मर्त्य, पाताल, तीनों लोकमें उसके समान सुन्दरी कोई कन्या नहीं थी। अतएव उसके विवाहके लिये स्वयंवर-समाचार सुनकर, राजा महाराजा क्या देवता तक उद्विग्न हो उठे। यहां तक कि देवराज इन्द्र, धर्मराज यम, जलदेव वरुण, और अग्निदेव भी तय्यार हो गये। सभोंने स्वर्ग छोड़कर विदर्भदेशकी यात्रा की।

अभी सन्ध्या नहीं हुई थी; सूर्यदेवके अस्ताचल पर्वत पर जानेमें अभी कुछ देर थी। बागके फूल कुछ खिल गये थे, कुछ खिलाही चाहते थे, इसी समय दमयन्ती अपनी सखियों समेत बागमें फूल चुनने के लिये गई।

आज दमयन्ती बहुतही प्रसन्न थी। वह मनमें विचारती थी; आज अवश्यही प्यारे नलसे भेट होगी। आज ही इतने दिनोंकी लगी आशा पूरी होगी। वह इस समय तालाबके किनारे एक लता-मण्डपमें बैठकर बहुतही सुन्दर एक हार गूँथ रही थी। सामने सखियोंके तोड़े हुए फूलोंका ढेर लगा हुआ था। सखियाँ भी प्रसन्नतासे आज दमयन्ती का

करनेके लिये फूल तोड़ रही थीं। दमयन्ती उन्हीं फूलोंको लेकर राजा नलके लिये एक बहुत ही मनोहर गजरा बना रही थी। इसी समय एकाएक एक मनुष्य वहाँ जाकर ठीक उसके सामने खड़ा हो गया।

सामने एक पुरुषको देखतेही दमयन्ती चौंकी और वहाँसे भागनेके लिये उठी। इतनेहीमें वह पुरुष बोला,—"राजकुमारी! आप डरें नहीं। मैं देवताओंका दूत हूँ—उनका समाचार लेकर आपके पास आया हूँ। आप बिना डरे देवताओंका अनुरोध सुन लें। आपका उत्तर पाकर मैं चला जाऊँगा। आपके डरनेका कोई कारण नहीं है।

दमयन्तीने कहा—"आप कोईभी हों—इस तरह ज़नाने बाग़में औरतोंके पास आकर खड़े हो जाना सभ्यता और भद्रताके विरुद्ध है। आप यहाँसे चले जाइये, यदि प्रहरी देखलेंगी तो आप विपद्में पड़ेंगे।"

वह बड़ेही नम्र भावसे बोला—"राजकुमारी! आप मुझे क्षमा करें; मैं मनुष्य हूँ—मनुष्यकी रीति नीतिसे भली भाँति परिचित हूँ; परन्तु देवताओंकी आज्ञासे मुझे यहाँ आना पड़ा है। आपका उत्तर पातेही मैं चला जाऊँगा। अब आप सुनिये—

आपके रूपगुणकी प्रशंसा सुनकर स्वयं देवराज इन्द्र आपसे विवाह किया चाहते हैं। यदि आप उनसे विवाह करें तो स्वर्गकी ईश्वरी होकर बड़े सुखसे नन्दन बनमें वास कर सकती

हैं। जिस स्वर्गके लिये लोग कठोर तपस्या करते हैं, वह आप-को योंही मिला चाहता है। उनके अतिरिक्त धर्म्मराज यम, जलेश वरुण और स्वयं अग्निदेव भी आपसे विवाह किया चाहते हैं। इनमेंसे प्रत्येकके बल, वीर्य और क्षमताको आप अच्छी तरह जानती हैं। इन चारोंमेंसे किसी एक को वरण करनेसे वह बड़ेही सुखी होंगे।"

दमयन्ती बोली—"यथेष्ट हुआ। अब अधिक सुननेकी आवश्यकता नहीं है। आप दया करके पूजनीय देवताओं से मेरा प्रणाम कहकर निवेदन कर दीजियेगा, कि मैं मनही मन पहलेही नल राजाको वरण कर चुकी हूँ। अब दूसरेको वरण करनेका मेरा अधिकार नहीं है।"

एकाएक उस मनुष्यके शरीरमें रोमाञ्च हो उठा—मानों बिजलीका प्रवाह बहने लगा, तोभी वह अपनेको सम्भालकर बोला—"राजकुमारी! आप किस बल पर देवताओंको त्यागती हैं? उनके विरोधी होनेपर मनुष्य नल क्या आपको बचा सकेगा?"

दमयन्तीने कहा—"अब विशेष कहनेकी आवश्यकता नहीं है। सभी देवताओंकी शक्ति मैं जानती हूँ, परन्तु आप स्त्रीका हृदय नहीं जानते, तभी ऐसा कह रहे हैं। स्त्रियोंके लिये सतीत्व अमूल्य रत्न है। उस रत्नकी रक्षाके लिये स्त्रियाँ सब तरहके कष्ट सह सकती हैं; यहाँ तक कि प्राण भी त्याग सकती हैं। अच्छा, अब आप जाइये।"

०

करनेके लिये फूल तोड़ रही थीं। दमयन्ती उन्हीं फूलोंको लेकर राजा नलके लिये एक बहुत ही मनोहर गजरा बना रही थी। इसी समय एकाएक एक मनुष्य वहाँ जाकर ठीक उसके सामने खड़ा हो गया।

सामने एक पुरुषको देखतेही दमयन्ती चौंकी और वहाँ से भागनेके लिये उठी। इतनेहीमें वह पुरुष बोला,—"राजकुमारी! आप डरें नहीं। मैं देवताओंका दूत हूँ—उनका समाचार लेकर आपके पास आया हूँ। आप बिना डरे देवताओंका अनुरोध सुन लें। आपका उत्तर पाकर मैं चला जाऊँगा। आपके डरनेका कोई कारण नहीं है।

दमयन्तीने कहा—"आप कोईभी हों—इस तरह ज़नाने बाग़में औरतोंके पास आकर खड़े हो जाना सभ्यता और भद्रताके विरुद्ध है। आप यहाँसे चले जाइये, यदि प्रहरी देखलेंगे तो आप विपद्में पड़ेंगे।"

वह बड़ेही नम्र भावसे बोला—"राजकुमारी! आप मुझे क्षमा करें; मैं मनुष्य हूँ—मनुष्यकी रीति नीतिसे भली भाँति परिचित हूँ; परन्तु देवताओंकी आज्ञासे मुझे यहाँ आना पड़ा है। आपका उत्तर पातेही मैं चला जाऊँगा। अब आप सुनिये—

आपके रूपगुणकी प्रशंसा सुनकर स्वयं देवराज इन्द्र आपसे विवाह किया चाहते हैं। यदि आप उनसे विवाह करें तो स्वर्गकी ईश्वरी होकर बड़े सुखसे नन्दन बनमें वास कर सकती

हैं। जिस स्वर्गके लिये लोग कठोर तपस्या करते हैं, वह आपको योंही मिला चाहता है। उनके अतिरिक्त धर्म्मराज यम, जलेश वरुण और स्वयं अग्निदेव भी आपसे विवाह किया चाहते हैं। इनमेंसे प्रत्येकके बल, वीर्य और क्षमताको आप अच्छी तरह जानती हैं। इन चारोंमेंसे किसी एक को वरण करनेसे वह बड़ेही सुखी होंगे।"

दमयन्ती बोली—"यथेष्ट हुआ। अब अधिक सुननेकी आवश्यकता नहीं है। आप दया करके पूजनीय देवताओं से मेरा प्रणाम कहकर निवेदन कर दीजियेगा, कि मैं मनही मन पहलेही नल राजाको वरण कर चुकी हूँ। अब दूसरेको वरण करनेका मेरा अधिकार नहीं है।"

एकाएक उस मनुष्यके शरीरमें रोमाञ्च हो उठा—मानों बिजलीका प्रवाह बहने लगा, तोभी वह अपनेको सम्भालकर बोला—"राजकुमारी! आप किस बल पर देवताओंको त्यागती हैं? उनके विरोधी होनेपर मनुष्य नल क्या आपको बचा सकेगा?"

दमयन्तीने कहा—"अब विशेष कहनेकी आवश्यकता नहीं है। सभी देवताओंकी शक्ति मैं जानती हूँ, परन्तु आप स्त्रीका हृदय नहीं जानते, तभी ऐसा कह रहे हैं। स्त्रियोंके लिये सतीत्व अमूल्य रत्न है। उस रत्नकी रक्षाके लिये स्त्रियाँ सब तरहके कष्ट सह सकती हैं; यहाँ तक कि प्राण भी त्याग सकती हैं। अच्छा, अब आप जाइये।"

उस मनुष्यने फिर कहा,—"अभागे नल देवताओंके वशमें हैं—यदि उनकी आज्ञासे वह न आसके, तब आपकी क्या दशा होगी ?"

दमयन्तीने तुरतही उत्तर दिया—"दक्षकी कन्या सतीकी जो दशा हुई थी वही मेरी होगी। नलके नामसे वरमाल अर्पण करूँगी—उन्होंने वह माला धारण की तो ठीकही है, नहीं तो उनके पवित्र चरणोंका ध्यान करती हुई और उनका पुण्यमय नाम स्मरण करती हुई इस जीवनको त्याग दूँगी।

अब वह मनुष्य स्थिर न रह सका, बोला—"हा! अभागे नल! जिस स्त्रीने हंसके सामने तुम्हें वरण कर स्वर्ग और प्राण की ममता त्याग दी, तुम उससे देवताओंके गलेमें वर-माल डालनेका अनुरोध करते हो! धिक्कार है तुम्हारे जीवनको! (कुछ ठहर कर) प्रिये! मैं ही नल हूँ। देवताओंने मुझे भेजा है। क्या करूँ? लाचार होकर यह दूतका काम करना पड़ा है।"

दमयन्ती अभी तक नीची दृष्टि कियेही उस मनुष्यसे बातें कर रही थी। यह बात सुनकर वह आश्चर्य्यमें आ गई। उसने अब आँखें उठाकर देखा तो क्या देखती है कि, वह पुरुष जिसकी लोगोंने हज़ारों प्रशंसाएँ की थीं, जिस रूपका वह दिनरात ध्यान किया करती थी, सचमुच वही रूप-वान् नल उसके सामने खड़े हैं। उसका हृदय-कमल आन-

न्दसे खिल उठा। वह लता-कुञ्जसे निकल कर बोली—"अब छल क्यों ? प्रभो ! लो यह तुम्हारी वरमाल ग्रहण करो।"

नलने कहा—"नहीं, मैं देवताओंका दूत बनकर यहाँ आया हूँ, इस अवस्थामें यह वरमाल मैं यहाँ ग्रहण नहीं कर सकता।" यह कहकर वह चले गये।

इधर यह हुआ, उधर स्वयम्वरका स्थान खूब सजा दिया गया। बहुतसे राजे, महाराजे, राजकुमार, देवता, यक्ष, रक्ष, गन्धर्व सभी कायदेसे अपने-अपने स्थानपर आकर बैठ गये। उसी समय हाथमें एक बहुतही सुन्दर फूलोंका गजरा लिये हुए दमयन्ती स्वयम्वर-भवनमें घुसी। उसके पीछे उसकी सखियाँ भी थीं।

एक तो रूपवती कन्या, दूसरे सखियोंने उसे सजाकर उसका सौन्दर्य और भी बढ़ा दिया। दमयन्तीको देख इस समय सभी राजा उद्विग्न होकर अपने-अपने इष्ट-देवको मनाने लगे। दमयन्ती वरमाल लेकर एक-एकके पास गई, परन्तु बिना किसी को देखही वह चारों ओरसे लौट आई। उसे नल कहीं भी दिखाई न दिये। अब वह निराश दृष्टिसे एक स्थान पर खड़ी होकर चारों ओर देखने लगी, तो क्या देखती है कि दूरपर एक कोनेमें पाँच नल एक समान बैठे हैं। पाँचों में किसी प्रकारका भेद नहीं मालूम होता। दमयन्ती समझ गई कि यह इन्द्र, यम, वरुण । अग्निदेवका चातुर्य है। इन्हीं पाचोंमें मेरे प्राणप्रिय

हैं। यह सोचती हुई वह वहां जाकर देवताओं की स्तुति करती हुई बोली—"हे देवगण! आप लोगों से कोई बात छिपी नहीं है। आप जानते हैं कि नलको मैं हंसके सम्मुख वरण कर चुकी हूँ। अब आप यह छल त्यागदें। मैं आप लोगोंकी कन्याके समान हूँ। इस अवस्थामें आपलोगोंका यह छल शोभा नहीं देता। आप लोग अब कृपाकर अपना-अपना रूप प्रकाशित करें, जिससे मैं नलको वरमाल पहना अपना जन्म सुफल करूँ।"

देवता दमयन्ती की नम्र और रसपूर्ण बातें सुनकर प्रसन्न होगये। उन्होंने अपना-अपना रूप धारण कर लिया। दमयन्तीने राजा नलके गलेमें वरमाल पहना दी। नलने प्रसन्नता से उसे ग्रहण करते हुए कहा—"जबतक यह जीवन रहेगा, मैं इसी तरह तुम्हें भी धारण करूँगा।



पाँचवाँ परिच्छेद।



नलके कार्य्यसे प्रसन्न होकर देवराज इन्द्रने उन्हें "अलक्षित विद्या" वरुणने "इच्छानुसार जल पानेकी शक्ति", धर्मराज यमने "प्राणिवध विद्या" के साथ ही साथ अस्त्र-शस्त्र, और अग्निने "बिना आगके आग जला लेनेकी शक्ति", नलको दी। ये चारों देवता चार वर नलको देकर स्वर्गको चले गये। बड़ी धूमधामसे विवाह हुआ। नल दमयन्तीको साथ ले, कुछ दिन बाद अपने राज्यमें लौट आये। वहाँ बड़े सुखसे उनके दिन बीतने लगे। क्रमसे दमयन्तीके एक लड़का और एक लड़की हुई। उनका नाम इन्द्रसेन और इन्द्रसेना रक्खा गया। इधर दमयन्तीको सुखी देख कलि और द्वापर नामक दो देवता जल उठे। वे भी दमयन्तीको पानेकी लालसासे स्वयम्बरमें पहुँचे थे; परन्तु दमयन्तीको न पासके। उन लोगोंने मनहीमन विचारा,—"दमयन्तीने देवताओंका बड़ा अपमान किया है। देवताओंकी उपेक्षा करके मनुष्यके साथ व्याह किया है, अतएव उसे कष्ट देकर दण्ड देना चाहिये।" यह विचार वे राजा नलके भाई पुष्करसे मिले उसे उभाड़कर नलसे जूआ खेलनेके लिये उत्तेजित

जूआ आरम्भ हुआ। धीरे-धीरे राजा नल राज्य, धन, सम्पत्ति जो कुछ था सब हार गये। दमयन्तीको जब यह समाचार मालूम हुआ; उसने तुरत ही अपने पुत्र और कन्याको वृद्ध मन्त्रीके साथ अपने पीहर विदर्भ देशको भेज दिया और राजाको जूएसे हटानेका उद्योग करने लगी, परन्तु उन्हें हटा न सकी। अन्तमें राजा नलका राजपाट सब पुष्करने छीन लिया और केवल एक-एक वस्त्र देकर दोनोंको घरसे बाहर निकाल दिया। नल और दमयन्ती दोनों भिखारी-वेशमें वनकी ओर चले।

इस समय नल राजाकी दशा उन्मत्तोंकीसी हो गई। वे वनके कष्ट देख दमयन्तीको अपने मायके चले जानेके लिये बार-बार अनुरोध करने लगे; परन्तु दमयन्ती कोई उत्तर न देकर शान्त, स्थिर और धीर भावसे उनकी बातें सुनती जाती थी। जब नल चुप होते, तब वह उन्हें समझाती और शान्त करनेका उद्योग करती थी, परन्तु राजा नलका उन बातों की ओर कुछ भी ध्यान न था। वह केवल उसे हटाने और मायके भेज देनेकी धुनमें व्यस्त थे। कभी-कभी दमयन्तीको अकेली छोड़ भाग जानेका उद्योग करते थे। परन्तु दमयन्ती धीरतासे उनका हाथ पकड़े वनमें इधर-उधर घूमती थी। कुछ समय तक इसी तरह घूमने पर दोनों भूख-प्याससे व्याकुल हो उठे; परन्तु उस वनमें भोजनका कोई भी पदार्थ दिखाई न दिया। कुछ दूर और आगे जानेपर नलको कुछ पक्षी

एक वृक्षपर बैठे हुए दिखाई दिये। नलने उन्हें पकड़नेकी बहुत कुछ चेष्टा की, परन्तु किसी तरह भी पकड़ न सके। अन्तमें अपनी धोती उतार कर उन पर फेंकी। पक्षी उस धोतीको भी लेकर उड़ गये।

"दुर्बलो दैव घातकः" वाली कहावत इस समय पूरी-पूरी चरितार्थ हुई। नङ्गी अवस्थामें नल एक घने जङ्गलमें छिपनेके लिये भागे। दमयन्ती उनको भागते देखकर पीछे-पीछे दौड़ी और अपनी साड़ीमेंसे आधा वस्त्र उन्हें पहननेको दिया। हाय! राजा नलको आज इस दुर्दशामें पड़ना पड़ा! एक वस्त्रसे दोनोंकी लज्जा निवारण होने लगी।

एक वस्त्रके दो छोर दोनों पहनकर वनमें घूम रहे थे। घूमते-घूमते दमयन्ती बहुत थक गई। वह राजा नलकी जाँघपर अपना माथा रखकर सो गई। नलने मनही मन विचारा—"दमयन्तीको छोड़नेका यही सुयोग है।" यह विचार उन्होंने दमयन्तीका माथा धीरे-धीरे अपनी गोदसे उतारदिया और उठनेकी चेष्टा करने लगे, पर एक वस्त्र रहनेके कारण उठ न सके। अब वह वस्त्र फाड़नेके विचारमें इधर-उधर देखने लगे। पासही एक कटारी पड़ी दिखाई दी। नलने उसी कटारीसे आधा वस्त्र फाड़ लिया और धीरेसे उठकर वहाँसे भाग गये। अर्द्धवसना, निद्रिता, दुःखिनी दमयन्ती वनमें अकेली पड़ी रही।

कुछ देर बाद जब दमयन्तीकी नींद खुली, तो

देख वह व्याकुल हो उठी। वस्त्रका मध्यभाग कटा हुआ देख उसे विश्वास हो गया कि,नल मुझे छोड़कर भाग गये। आह! उस समय उसकी क्रन्दन-ध्वनिसे जङ्गल गूँज उठा। वह वनमें पागलिनी सी घूमघूमकर वृक्ष, पौधे, जीव-जन्तु जिसे देखती उसीसे राजा नलका हाल पूछती थी। परन्तु उसकी भड़की हुई वियोगाग्नि को शान्त करनेवाला उत्तर उसे कहींसे भी नहीं मिलता था। दमयन्ती योंही रोती-कलपती औरभी भयानक जङ्गलमें जा पहुँची।

अभी वह कुछही दूर आगे बढ़ी होगी कि, एक भयानक अजगर उसे निगलनेके लिये दौड़ता हुआ सामने आपहुँचा। उस समय दमयन्ती ज़ोरसे चिल्लाकर बोली—"प्राणेश्वर नल! अजगरके ग्राससे अब मेरा सब दुःख दूर हुआ चाहता है,परन्तु मरनेके समय आपके चरणोंका दर्शन न मिला, यह दुःख कभी न भूलूँगी।" इसीसमय एक व्याधाने तीरसे उस अजगरको मार डाला और भीषण मूर्त्तिसे दमयन्तीका अलौकिक सौन्दर्य्य देख मुग्ध हो गया और उसे पकड़नेके लिये दौड़ा। अब दमयन्ती को अपनी रक्षा कठिन मालूम होने लगी, वह अपनी रक्षाके लिये व्याकुल हो उठी। परन्तु इस भयानक जङ्गलमें कौन था जो उसकी रक्षा करता? वह ईश्वरका स्मरण करने लगी। व्याधा को पिता कहकर उससे क्षमा-भिक्षा माँगने लगी। पापी व्याधा इतनेपर भी शान्त न हुआ और उसे पकड़नेके लिए आगे बढ़ा। उस समय दमयन्तीकी क्रोधाग्नि

भभक उठी। वह बिगड़कर बोली—"यदि इस जगत्‌में मैंने राजा नलको छोड़ कभी दूसरे पुरुष पर स्वप्न में भी ध्यान न दिया हो, तो मेरे सतीत्व के बलसे तू दग्ध हो जाय।"

इतना कहतेही एक भयानक अग्नि उसी व्याधा के पैरसे उत्पन्न हुई और वह देखते-देखते जलकर भस्म होगया।

पागलिनी दमयन्ती स्वामीकी खोजमें चारों ओर घूमती हुई एक नगरमें जा पहुँची। इस समय उसकी दशा ठीक पगली-कीसी थी। सिवा नलके उसके मुँहसे और कुछ नहीं सुन पड़ता था। उसकी आधी साड़ी, सरके खुले केश और धूलभरे शरीरको जो देखता, वही उसे पगली समझकर उसे तङ्ग करता।

योंहीं पगलीके वेशमें दमयन्ती नलको खोजती हुई चेदी राज्यमें जा पहुँची। राहमें बहुतसे लड़के उसके पीछे घूमने लगे। अचानक हल्ला मचा। कुछ देरबाद दमयन्ती घूमती हुई राजमहलके सामने जा पहुँची। चेदी राज्यकी रानी उस समय खिड़की से सड़ककी शोभा देख रही थीं। दमयन्तीकी यह दशा देख उन्होंने दयाकर उसे भीतर बुलवा लिया। उसका वह परिचय पूछने लगीं।

दमयन्तीने कहा—"मेरे स्वामी जूएमें राजधन सब खोकर मुझे साथ लिये-लिये वनमें घूमते थे। हमलोग यही एक वस्त्र पहन कर भूमिमें सोरहे थे। जब मेरी निद्रा खुली तो देखा कि आधा कपड़ा फाड़ पतिदेव मुझे छोड़ कहीं चले

उसी समय से मैं जङ्गलोंमें उनको खोजती हुई आज यहाँ आ पहुँची हूँ। बताओ, मेरे देवता कहाँ हैं? यह कहती हुई दमयन्ती रोने लगी।

रानीने कहा—"तुम चिन्ता न करो, तुम अब यहाँ आरामसे रहो। मैं सब देशोंमें अपने दूत भेजकर तुम्हारे स्वामीका पता लगाती हूँ।"

दमयन्तीने कहा—"मेरा यहाँ रहना कठिन है। मैं कभी किसी पुरुषसे बात न करूँगी। किसीका जूठा न खाऊँगी, न किसीके पैरके हाथ लगाऊँगी। मैं आरम्भसे इन बातोंको पालन करती हूँ। आपके यहाँ रहकर यदि मेरा यह व्रत भङ्ग न हो तो मैं यहाँ रह सकती हूँ।"

दमयन्तीकी बातें सुनकर राजमाताने उसे बहुत कुछ धीरज दिया और राजकन्याके साथ रहनेका प्रबन्ध कर दिया।

दमयन्तीने राजकन्याके साथ रहनेपर भी अपनी वह आधी धोती न छोड़ी। वह धूल और मिट्टी ही उसके शरीरका ज़ेवर रही।

इधर विदर्भदेशके राजा भीमसेनको जब नलका सब हाल मालूम हुआ, तो उन्होंने कन्या और जामाता को खोज़में चारों ओर मनुष्य भेजे। सुदेव नामक एक ब्राह्मण चेदी राज्य में आ पहुँचा। वह दमयन्तीको देखतेही पहचान गया। उसके पहचानने का प्रधान चिह्न दोनों भौहों के बीचमें एक तिल था। सुदेवने दमयन्ती

और नलके चलेजानेका सब समाचार राजमातासे कहा और दमयन्तीके माता-पिताके दुःखकी बातें कहीं, जिन्हें सुनकर दमयन्ती रोने लगी। यह चेदी राज्यकी महारानी दमयन्ती की मौसी थी। दमयन्तीने यह परिचय पाकर उन्हें प्रणाम किया।

अब दमयन्ती उनसे विदा ले, सुदेव के साथ अपने मायके कुण्डिन नगरमें पहुँची।



छठा परिच्छेद ।



दमयन्ती की यह दशा देख उसके माता-पिता और भी व्याकुल हो उठे। अब उन लोगोंने बहुतसे मनुष्य राजानलकी खोजमें इधर-उधर भेजे। दमयन्तीने उन मनुष्योंसे कह दिया कि, तुम प्रत्येक मनुष्य से कहना—

"निर्जन बन में छोड़ प्रिया फाड़ी है साड़ी
दोष कौन तें त्याग दई अनुरक्ता नारी ?"

इस प्रश्नका जो कोई जो उत्तर दे, उसे उसी समय मुझसे आकर कहना।

ब्राह्मण दमयन्ती का संवाद लेकर राज्योंमें घूमने लगे। कुछ दिन बाद एक ब्राह्मण इस प्रश्नका उत्तर लेकर दमयन्ती के पास आ पहुँचा और बोला—"आपके प्रश्नका उत्तर किसी राज-दरबार से तो नहीं मिला ; परन्तु अयोध्याके राजा ऋतु-पर्ण के बाहुक नामक सारथीने आपके प्रश्नका उत्तर दिया है—

"हे द्विजवर ! कुल-वधू-धर्म अति गूढ़ सुहावन ।
पति-सेवा, पति-प्रेम सदा उनके मन भावन ॥

यद्यपि पति हो नीच, कुकर्मी, दोषी जगमें।
पै सती नारी पति-निन्दा नाहीं लातीं मनमें॥
मूर्ख होय, धनहीन होय, पति और धृष्ट हो।
धर्म-अधर्म विचार त्याग सबसे निन्दित हो॥
सती नारि वे दोष कभी ना सबसे कहतीं।
दोष टारि गुण सदा जगत्में वर्णन करतीं॥
स्वामी से यदि कष्ट नारि बहुविध पाती हैं।
अपने कर्म, औ भाग्य तथा निजको निन्दति हैं॥"

बाहुकका यही उत्तर है। अब आपको क्या आज्ञा है? दमयन्ती ने उस ब्राह्मण को बहुत कुछ देकर विश्राम करनेके लिये कहा। इधर दमयन्तीने सुदेव नामक ब्राह्मणको बुलाकर कहा—"आप अभी अयोध्या चले जाइये। वहाँके राजा ऋतुपर्ण से कहियेगा, यदि आपको दमयन्तीकी इच्छा हो तो कल सवेरे अवश्य कुण्डिन नगरमें पहुँचिये। सवेरे ही स्वयम्बर होगा।"

सुदेवने अयोध्याके राजासे दमयन्तीका सन्देसा कहा। सुनतेही राजा ऋतुपर्ण आश्चर्यमें आकर बोले—"दमयन्ती दूसरा स्वयम्बर क्यों करती है?"

सुदेवने कहा—"उनके पतिका पता नहीं लगता। नल जीवित हैं या मर गये, यह भी मालूम नहीं होता।"

सुनतेही राजा ऋतुपर्णने सारथी बाहुकको

कहा—"क्या तुम कल सूर्योदय तक मुझे कुण्डिन नगर में पहुँचा दे सकते हो?"

बाहुक ने कहा—"आज संध्या को ही पहुँचा दूँगा।" मैं रथ तय्यार करता हूँ, आप तैयार हों।"

दमयन्ती के दूसरी बार के स्वयम्बर का समाचार सुनकर बाहुक रूपधारी नल भी चकराये। वह मनही मन विचारने लगे—"यह क्या! यह सच्चा स्वयंवर है अथवा नलके बुलाने का कौशल है?"

राजा ऋतुपर्ण रथपर सवार हुए। रथ हवाकी तरह उड़ता हुआ जाने लगा। सारथी बाहुकका रथ चलाना देख राजा ऋतुपर्ण अचरजमें आकर बोले—"बाहुक! यह विद्या तुम मुझे सिखा दो। बदले में मैं तुम्हें गणित विद्याका मन्त्र बता दूँगा।"

बाहुक ने रथ चलानेकी विद्या सिखा दी। बदलेमें राजा ऋतुपर्ण ने गणनाका वह मन्त्र बाहुक को बताया, जिससे पदार्थको देखतेही उसकी गणना ध्यान में आजाती थी। इसी समय कलि नामक देवता बाहुक के शरीरसे बाहर निकल कर खड़ा होगया। नलने उसको मारना चाहा। परन्तु वह हाथ जोड़कर बोला,—"मुझे क्षमा करो, अब तुम्हारे दुःखके दिन गये, दमयन्ती ने हम लोगोंको त्यागकर तुमसे व्याह किया था; उसीका फल देने के लिये लिये मैंने इतने कष्ट तुम्हें दिये, परन्तु वनमें जब तुम्हें कर्कोट नामक सर्पने काटा, उसी समयसे मैं

उस विषकी ज्वालासे दग्ध हो रहा हूँ ; तथापि मैं तुम्हारे शरीरमें बैठा था। परन्तु अब इस मन्त्रके प्रभावसे नहीं बैठा जाता। मुझे क्षमा करो। बाहुक ने उसे क्षमा कर दिया।



सातवाँ परिच्छेद ।



सन्ध्याका समय है। दमयन्ती अपने मायके के कोठे पर बैठी विचार रही है—"सिवा नलके किसी दूसरेमें इतनी शक्ति नहीं है कि, वह रथको सवेरे तक अयोध्या पहुँचा सके। यदि रथ आगया तो अवश्यही बाहुक नल ही होंगे।" इसी समय मेघकी गरजके समान उस रथका शब्द हुआ और क्षणभरमें रथ दरवाज़े पर आलगा। दमयन्तीको अब निश्चय हो गया कि, सिवा नलके और कोई रथ इस तरह नहीं चला सकता। उसने रथके सारथी को देखा, परन्तु देखतेही आश्चर्यमें आगई। जिसके समान सुन्दर इस संसारमें दूसरा नहीं है, वही नल इस समय भयानक कुरूप हो रहे हैं। यह कौन हैं? नलका तो ऐसा रूप नहीं था। उसने सारथी के कामोंको जाँचके लिये अपनी केशिनी नामक दासीको नियुक्त कर दिया।

इधर राजा ऋतुपर्ण राज-सभामें उपस्थित हुए। वहाँ स्वयंवरकी कोई भी तय्यारी नहीं दिखाई दी। वह मन ही मन आश्चर्य करने लगे। मुँहसे कुछ भी न कह सके। राजा भीमसेनने उनका बड़ा आदर-सत्कार किया।

केशिनी ने बाहुक के पास जाकर राजा नलका हाल

पूछा। उत्तरमें बाहुक बोला—"कल सवेरेही जब उसकी स्त्री दूसरा पति करेगी, तब अब नलके खोजकी क्या आवश्यकता है? पुत्र कन्याके वर्त्तमान रहते भी, जो नारी दूसरा पति ग्रहण किया चाहती है उसे संसार क्या कहेगा?" इतनी बातें कहते-कहते बाहुकका चेहरा मलिन हो गया और आँखों में आँसू भर आये।

केशिनी दमयन्तीके स्वयम्वरका हाल कुछ नहीं जानती थी। वह इतनी बातके सुनतेही बिगड़कर बोली—"आप क्या कहते हैं, दमयन्ती के समान कोई स्त्री दिखाई भी देती है? स्वामी वनमें आधा वस्त्र फाड़कर लेगये। वह अभी तक उसी बचे हुए आधे कपड़ेको पहनकर अपने दिन काट रही है; सदा अपने पतिके ध्यानमें मग्न रहती है—क्या वह कभी दूसरा पति ग्रहण कर सकती है?"

इतनी बातोंके सुनतेही बाहुक रो उठा। केशिनी ने बाहुक की अवस्था ध्यानसे देखी और दमयन्ती को कह सुनायी। दमयन्ती के मनमें कुछ आशा हुई। उसने केशिनी को उसके सब कामों पर ध्यान रखनेके लिये कहा। कुछ देरबाद केशिनी ने दमयन्ती से आकर कहा—"बाहुकके सभी काम देवताओं के समान हैं। घड़ेमें एक बूँद जल नहीं था, परन्तु बाहुक के हाथ रखतेही घड़ा जलसे भर गया। उसी जलसे उसने भोजनके पदार्थ धोये। आग ज़राभी नहीं थी, परन्तु लकड़ी फूँकतेही आग जल उठी।"

दमयन्ती यह सुनकर और भी प्रसन्न हुई ! उसने केशिनी के साथ पुत्र और कन्याको बाहुकके पास भेजा। बाहुकने उनको देखतेही आनन्दसे अधीर होकर उन्हें गले लगा लिया। उनका मुँह चूमा। इस समय बाहुक की आँखोंसे आँसुओं की झड़ी सी लग/ही थी। कुछ देर बाद अपनेको सम्हालकर बाहुकने केशिनी से कहा—"देखो, कुछ मनमें न लाना। मेरे भी ऐसा ही एक पुत्र और ऐसीही एक कन्या थी; परन्तु आज छः वर्ष से उनका मुँह नहीं देख सका। इन्हें देखने से ही वे याद आते हैं।"

केशिनी ने दमयन्ती को यह समाचर सुनाया। अब द यन्ती समझ गई, यह निश्चय ही नल हैं। किसी कारण इनका रूप बदल गया है। वह माता की अनुमति लेव बाहुकके पास गई, परन्तु कुछ बोल न सकी। नल बहुत दि बाद दमयन्ती को देखकर अब अपने को सम्हाल न सके। रोते-रोते बोले—"विधाताका भी कैसा विचित्र विधान है ! जिस दमयन्तीने इसी राज में देवताओंको त्यागकर राजा नलको वरण किया था, आज वही दमयन्ती दूसरी बार पति ग्रहण किया चाहती है। कल यह काम हो जायगा।"

दमयन्ती यह बात सुनकर लज्जित हुई ; तथापि दृढ़ताके साथ बोली—"दमयन्ती सचमुच दूसरा पति ग्रहण करेगी ! जब राजा नलने सारथीका रूप धारण कर दूसरेकी नौकरी कर ली है, तब दमयन्ती भी आज उसी सारथीको पति बनाकर

ग्रहण करेंगी। द्वितीय पति न होनेपर भी दू
है।

इस बार राजा नल लज्जित हुए। बोले—"प्रिये! तुम्हे छोड़कर जङ्गलमें घूमता-घूमता मैं एक ऐसे स्थानपर जा पहुँचा, जहाँ भयानक आग लगी हुई थी। उस आग के बीचमें एक सर्प जल रहा था। सर्पकी चिल्लाहट से जङ्गल गूँज रहा था। मैंने सर्पकी यह दशा देख उसे आगसे बचाया और अपनी छातीसे लगा उसे शान्त करने लगा। उसने उसी समय मुझे काट लिया। तबसे ही मेरा रूप इतना बदल गया है। उसने उसी समय मुझ सेकहा—'जब तुम हमारा स्मरण करोगे, तभी तुम्हारा पहला रूप हो जायगा। इसके बाद मैं घूमताफिरतो अयोध्या पहुँचा और वहाँ सारथीके भेषमें राजा ऋतुपर्ण से गणना सीखने की अभिलाषासे रहने लगा।"

इतना कहकर राजा नलने कर्कोटका स्मरण किया। तुरत ही उनका पहलासा रूप होगया। दमयन्ती स्वामीके चरणोंपर मस्तक रखकर क्षमा मांगने लगी। पुत्र-कन्याभी बहुत दिनों बाद पिताको देख बड़े प्रसन्न हुए।

सवेरा हुआ। सब समाचार राजा ऋतुपर्ण ने सुना। सचमुच दमयन्ती का आज दूसरा स्वयम्बर हुआ। उनका बाहुक सारथी स्वयं राजा नल थे। भीमसेनने जब सुना कि, जामाता घर आगये हैं, तब उनकी प्रसन्नताका ठिकाना न रहा।

राजा नलको विदर्भ का राज्य दे दिया। राजा दमय पुष्कर से भी अपना राज्य छीन लिया। सभी सुखी हुए। दमयन्ती की पति-भक्तिने आज फिर सभोंको प्रसन्न कर दिया।

